संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

हिन्दी

वर्ष : ९
अंक : ७०
अक्तूबर १९९८

पूज्यपाद संत श्री
आसारामजी बापू

सदा दिवाली संत की, आठों प्रहर आनंद ।
निज स्वरूप में मस्त हैं, छोड़ जगत के फंद ॥

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ९
अंक : ७०
९ अक्तूबर १९९८

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क
भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

इस अंक में

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग : YES चैनल पर 'सत्संग सुधा' रोज सुबह ८.३० से ९ एवं दोपहर १२ से १२.३०. SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८.

आश्रम विषयक जानकारी
Internet पर उपलब्ध है : www.ashram.org

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

किसीके घर का बल्ब अथवा फ्यूज उड़ जाये तो क्या सबके घर के बल्ब अथवा फ्यूज उड़ जाते हैं ? किसीका फ्रीज खराब हो जाय तो क्या सबके फ्रीज खराब हो जाते हैं ? नहीं।

विद्युत् फ्रीज से जुड़ती है तो पानी को ठंडा बनाती है और उसी विद्युत् को हीटर से जोड़ते हैं तो वही विद्युत् पानी को गर्म करती है। विद्युत् पानी को ठंडा भी करती है और गर्म भी करती है। ऐसे ही सबको सत्ता देनेवाला चैतन्य एक-का-एक है किन्तु भिन्न-भिन्न अंतःकरणों के कारण भिन्न-भिन्न क्रियाएँ करता दिखता है। जैसे विद्युत् कहीं पंखे के द्वारा हवा फेंकती है, कहीं ए.सी. के द्वारा ठंडी हवा बनाती है, कहीं फ्रीज के द्वारा बर्फ बनाती है, स्लाटर-हाऊस में कत्ल करती है और वही पावर-हाऊस की विद्युत् संतों की सभा में उनकी आवाज को माइक द्वारा जन-जन तक भी तो पहुँचाती है।

जब मनुष्य की खोजी हुई विद्युत् एक होते हुए भी अनेक रूप बना लेती है तो भगवान के अनेक रूप बन जायें, इसमें क्या बड़ी बात है ? जैसे चन्द्रमा एक है, उस एक ही चन्द्रमा को पूर्णिमा की रात में सोने के बर्तन में पानी डालकर देखो तो चंद्रमा एक प्रकार का दिखेगा और चाँदी के थाल में पानी डालकर देखो तो दूसरे प्रकार का दिखेगा। पीतल के बर्तन में तीसरे प्रकार का दिखेगा और मिट्टी के बर्तन में देखो तो चंद्रमा चौथे प्रकार का दिखेगा। अलग-अलग धातु के हजारों बर्तन रखो तो चंद्रमा हजार प्रकार का दिखेगा, फिर भी होता एक-का-एक है। ऐसे ही वह सर्वव्यापक सच्चिदानंद परमात्मा अनेक रूपों में दिखते हुए भी एक-का-एक ही है।

जैसे, अनेकों तरंग और बुलबुले सागर से पैदा होते हैं, नाचते, गाते, उछलते-कूदते हैं फिर उसी सागर में लीन हो जाते हैं ऐसे ही, पंचमहाभूतों से सब पैदा होते हैं, पंचमहाभूतों में जीते हैं एवं अंत में पंचमहाभूतों में ही लीन हो जाते हैं। पंचमहाभूतों में जिस परमात्मा की सत्ता है, वही सत्ता सबके दिल में ज्यों-की-त्यों है।''

उस प्रोफेसर को सत्य का आभास हुआ और वह अति विनम्र होकर मुझसे कहने लगा : ''बापूजी ! अब हमें वास्तविकता का पता चला।''

महापुरुषों की बात समझ में आ जाये तब भी सत्य है और हमारी अल्प मति के कारण समझ में न आये तब भी महापुरुषों की बात, शास्त्रों की बात सत्य ही है। जैसे, बच्चा स्कूल जाता है तो शिक्षक कहता है कि पृथ्वी गोल है, तब बच्चे को समझ में नहीं आता फिर भी वह परीक्षा में लिखकर आता है कि 'पृथ्वी गोल है।' फिर धीरे-धीरे उसे पता चलता है कि पृथ्वी कैसे गोल है। ऐसे ही भगवान के विषय में जो बात है उसे पहले केवल मान लो, फिर बाद में जान भी जाओगे कि भगवान सत्य है... शरीर मिथ्या है। भगवान नित्य है... शरीर बदलनेवाला है। भगवान साक्षी है... सुख-दुःख मन को होता है।

मैं जब लन्दन से सत्संग करके लौटता हूँ तब भारत के लोग कहते हैं : ''बापूजी गोरे हो गये।'' अफ्रीका से आता हूँ तो कहते हैं : ''बापूजी काले हो गये।'' अमेरिका से वापस आता हूँ तो कहते हैं : ''बापूजी मोटे हो गये।'' जब हिमालय से वापस आता हूँ तो कहते हैं : ''बापूजी दुबले हो गये।'' लेकिन हकीकत तो यह है कि मैं कभी गोरा नहीं होता, कभी काला नहीं होता। गोरा और काला तो चमड़ा होता है। मोटा और दुबला तो मांस होता है। ठिंगना और लम्बा तो हड्डियों का ढाँचा होता है। मैं तो वही-का-वही रहता हूँ।

तुम भी जब आईना देखो तो अपनेको काला या गोरा मत मानना। तुम काले भी नहीं हो और गोरे भी नहीं हो। तुम आईना देखो, हमारी मना नहीं है। तुम फैशन करो, हमारी मना नहीं है। लेकिन आईने में जिसे तुम देख रहे हो, वह तो एक दिन खाक में मिल जाएगा। 'जिसकी शक्ति से देखते हो वह सब सच्चा, बाकी सब कच्चा है' - ऐसा समझकर आईना देखो तो आपको मना नहीं है। आईना देखकर अगर कहो कि 'मैं अच्छा लगता हूँ' - तो फिर विश्वसुन्दरी जैसी बात हो जाएगी।

भगवान बुद्ध के जमाने में एक विश्वसुन्दरी थी। राजा ने उसे अपने मंत्रियों के साथ बुद्ध के दर्शन

भागवत की दस बातें

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

ईश्वर सत्यस्वरूप है, चैतन्यस्वरूप है, आनंद-स्वरूप है, ज्ञानस्वरूप है और अनंत है। हरि अनंत है, हरिकथा अनंत है, हरिलीला अनंत है, हरि का सामर्थ्य अनंत है और आप सब उसी अनंत के अविभाज्य अंग हैं। जैसे आकाश अनंत है लेकिन घड़े के अंदर आकाश आया तो वह छोटा है, लोटे का आकाश भी छोटा है। एक छोटी-सी लोटी में भी आकाश छोटा है लेकिन वह छोटा तभी तक है, जब तक अपनेको लोटी, लोटा या घड़ा मानता है। यह आकाश जब अपनेको महाकाश का अविभाज्य अंग मानता है, तब तो वह बड़ा ही है। ऐसे ही जीव जब अपनेको शरीर मानता है, किसी नात-जातवाला मानता है, जन्मने-मरनेवाला मानता है, तब वह छोटा है लेकिन शरीर होते हुए भी जब अपनेको शरीर नहीं मानता है, नात-जात का व्यवहार करते हुए भी नात-जातवाला नहीं मानता है परन्तु जिससे सब दिखता है, उस परमेश्वर को, पाण्डुरंग को, विट्ठल को, आत्मा को, ब्रह्म को जब अपना आत्मा मानता है तब वह बाहर से छोटा दिखते हुए भी महान् है। ऐसे सच्चिदानंदघन परमात्मा को हम नमन करते हैं।

सच्चिदानंदरूपाय विश्वोत्पत्त्यादि हेतवे ।
तापत्रयविनाशाय श्रीकृष्णाय वयं नमः ॥

श्रीमद् भागवत में आत्मा-परमात्मा के स्वरूप का ज्ञान देने के लिये दस बातों की चर्चा की गई है :

(१) सृष्टि की उत्पत्ति कैसे हुई ?

(२) विविध योनियों में जीव कैसे जाता है ?

(३) सृष्टि किस स्थान पर टिकी है ?

(४) सृष्टि सूखने पर इसे कौन सींचता है ?

(५) वासनाएँ कैसे होती हैं और कैसी-कैसी होती हैं ?

(६) काल का विभाग कैसे होता है ?

(७) भक्तों के चरित्र कैसे होते हैं ? कौन-कौन-से भक्त किस-किस प्रकार से महान् हो गये हैं और उन्होंने किन-किन मार्गों का अनुसरण किया है ?

(८) भगवत्प्रेम में मन का निरोध कैसे होता है ?

(९) मुक्ति क्या है ? सायुज्य मुक्ति, सामीप्य मुक्ति, सारूप्य मुक्ति, सालोक्य मुक्ति, सद्यो मुक्ति, स्वर्गीय मुक्ति, कैवल्य मुक्ति आदि विविध मुक्तियों का विस्तृत वर्णन इस शुकशास्त्र में है।

(१०) परमात्मा का स्वरूप क्या है ?

सौराष्ट्र में सत्संग के दौरान् एक प्रोफेसर मेरे निवास पर आया और कहने लगा :

''बापूजी ! आपकी कथा सुनकर हमें बहुत आनंद आता है, बहुत अच्छा लगता है। आपके गुरुजी की कथा भी हमने सुनी थी। मैं पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी बापू को तो मानता हूँ लेकिन उनकी बात नहीं मानता हूँ।''

मैंने पूछा : ''क्यों नहीं मानते ?''

प्रोफेसर : ''आपके गुरुजी कहते थे कि 'आत्मा एक है और बह सबमें है। आत्मा ही परमात्मा है।' यह बात हम नहीं मानते। यदि आत्मा सबमें एक है तो कोई एक व्यक्ति मर जाये तो सब लोग मर जाने चाहिये। एक आदमी भोजन करे तो सबका पेट भर जाना चाहिये। एक आदमी को बुखार आये तो सबको बुखार आ जाना चाहिये।''

मैंने देखा कि भले ही लौकिक जगत में यह विद्वान है, प्रोफेसर है लेकिन आध्यात्मिक जगत में अंगूठाछाप है। मैंने उससे कहा :

''प्रोफेसर ! पावर-हाऊस एक है और उस एक पावर-हाऊस से विद्युत् सबके घर में जाती है। अब,

करने भेजा। बुद्ध एकांत कुटिया में थे। विश्वसुन्दरी कहने लगी : ''बुद्ध हमें दर्शन नहीं देते हैं तो हम वापस जाते हैं।''

मंत्रियों ने समझा-बुझाकर उसे रोक रखा। इतने में भगवान बुद्ध आये। विश्वसुन्दरी को तो अपने सौन्दर्य का अभिमान था। बुद्ध को देखकर वह जाने लगी। बुद्ध ने देखा कि इसे तो घमंड है ! बुद्ध ने कहा :

''ठहरो ! सामने खड़ी हो जाओ।''

उसने आज्ञा मानी और बुद्ध ने अपने भीतर संकल्प किया। वह विश्वसुन्दरी अपने शरीर की आयु को क्रमशः बढ़ती हुई देखने लगी : 'मैं सोलह साल की युवती हूँ... मैं पच्चीस साल की यौवना हूँ... अब मैं पैंतीस साल की हो गई... अब चालीस साल की हो गई... अब पचास साल की हो गई... अब तो कमर भी थोड़ी-सी कमजोर हो गई है... अब तो जवानी की लाली और चमक-दमक भी नहीं रही है... अब चलने-फिरने की शक्ति भी मन्द पड़ गई है...'

पचपन-साठ वर्ष की अवस्था का आभास होते ही उसे लगा : 'कमर झुक गई है... नाक भी थोड़ी टेढ़ी हो गयी है... आँखों में से थोड़ा-थोड़ा पानी भी आने लगा है... अब मैं सत्तर साल की हो गई हूँ... हाथ में लकड़ी आ गई है... अब तो मेरी ओर कोई देखता ही नहीं है... कोई पूछता भी नहीं है... बूढ़ी बन्दरी जैसा मेरा चेहरा हो गया है...'

विश्वसुन्दरी यह सब देखकर घबरा गयी। वह चिल्ला उठी :

''भन्ते ! यह आप क्या दिखा रहे हैं ?''

बुद्ध कहते हैं : ''मैं कुछ नहीं दिखा रहा हूँ। मैंने कुछ जादू नहीं दिखाया। तुम्हें जो आगे होनेवाला है, उसे ही अभी दिखा रहा हूँ। तू अपने सौन्दर्य का अभिमान मत कर, जवानी का गर्व मत कर, इस रूप-लावण्य पर अधिक मत इतरा। जिस परमात्मा की चेतना से यह सौन्दर्य मिला है, उस परमात्म-चेतना को याद कर। यह सौन्दर्य तो मिथ्या है। यह पहले नहीं था और बाद में भी नहीं रहेगा। अब भी वह 'नहीं' की ओर जा रहा है... दिनोंदिन ढलता ही जा रहा है।''

बुद्ध के वचनों ने बड़ा असर किया। विश्वसुन्दरी को वास्तविकता का ज्ञान हुआ और वह बुद्ध के चरणों में झुक गई।

श्रीमद् भागवत भी इसी तरह की दृष्टि देता है कि जो मिथ्या है, उसे मिथ्या जान लो। मिथ्या को सत्य मानकर और वास्तविक सत्य का अनादर करके जन्म-जन्मान्तर के चक्कर में मत पड़ो। पेड़-पौधे एवं पशु की योनि में मत जाओ। यक्ष-गन्धर्वों की योनि में भी मत जाओ बल्कि तुम तो अजन्मा, अविनाशी, अमर, नित्य, शाश्वत परमात्मा को पहचानकर मुक्त हो जाओ।

ब्रह्माभ्यासी

चित्त में आत्मा का चिन्तन, कथन, परस्पर बोधन, प्राणों की चेष्टा और आत्मपद के मनन को ब्रह्माभ्यास कहते हैं। शिष्यों को उपदेश करना, परस्पर बोध करना और निर्णय करके निश्चय करना, इन तीनों के परायण रहना ब्रह्माभ्यास है। जिन पुरुषों के रात-दिन अध्यात्मशास्त्र के चिन्तन में व्यतीत होते हैं और जो वासना के दास नहीं होते, जिन पुरुषों के पापों का अन्त हुआ है और पुण्य बढ़े हैं, जो राग-द्वेष से मुक्त हुए हैं, जिनकी भोग-वासना क्षीण हुई है और जो संसार के अभाव की भावना करते हैं, जिनकी बुद्धि वैराग्यरूपी रंग से रंगी है और आत्मानंद की ओर वृत्ति धावती है, जिन पुरुषों ने जगत का अत्यन्त अभाव जाना है कि यह जगत आदि में उत्पन्न नहीं हुआ, जो दृश्य को असत् जानकर उसे त्यागते हैं, परम तत्त्व को सत्य जानते हैं और इस युक्ति से अभ्यास करते हैं, ऐसे उदार आत्माओं को ब्रह्माभ्यासी कहते हैं।

(श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण)

बुद्धि के प्रकार

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

बुद्धि दो प्रकार की होती है : व्यवसायात्मिका बुद्धि और अव्यवसायात्मिका बुद्धि।

व्यवसायात्मिका बुद्धिवाले का निर्णय होता है कि : 'जीवन का सूर्य अस्त हो जाये उसके पहले मुझे जीवनदाता का अनुभव करना है। कैसी भी परिस्थिति आ जाय लेकिन समता रखनी है। संसार के संबंधों को सत्ता देनेवाले आत्मा-परमात्मा का संबंध मुझे जान लेना है।'

व्यवसायात्मिका बुद्धिवाला सिर्फ एक भगवान की ही शरण जाता है। उसका लक्ष्य एक ही होता है। वह अलग-अलग व्यवहार करेगा, दूसरे देवताओं का पूजन करेगा लेकिन उसका इष्टदेव एक ही होगा। इष्टदेव की पूजा करने के बाद भी उसकी यह जिज्ञासा होगी कि मुझे मेरे इष्ट तत्त्व का साक्षात्कार हो जाय। यह व्यवसायात्मिका बुद्धि है। इस बुद्धि का विकास होने पर संसार के भोग-पदार्थ में वैराग्य आता है, विवेक की वृद्धि होती है, ऐश्वर्य, यश व प्रसन्नता की अभिवृद्धि होती है और जीवन में आनंद के फूल खिलते हैं।

अव्यवसायात्मिका बुद्धिवाला भगवान को नहीं मानता। संतों व शास्त्रों में श्रद्धा नहीं रखता। जो एक भगवान को नहीं मानता, उसे हजार-हजार व्यक्तियों और वस्तुओं को मानना पड़ता है। जब बुद्धि अव्यवसायात्मिका होती है तब इन्द्रियगत ज्ञान में आसक्ति बढ़ती है। फलतः ईर्ष्या, भय, क्रोध और अशांति में वृद्धि होती है। मनुष्य का जीवन भीतर से कमजोर हो जाता है।

जब अव्यवसायात्मिका बुद्धिवाले लोगों का बहुमत होता है तब समाज में अशांति फैल जाती है। समाज को वस्तुएँ प्रदान कर प्रसन्न नहीं रखा जा सकता लेकिन समाज के लोगों में सच्ची समझ होगी तो समाज आत्मकल्याण के रास्ते जा सकेगा। भौतिकवाद वस्तुएँ देकर हमको सुखी बनाना चाहता है। फलतः अनंत इच्छाएँ उत्पन्न होने से हम अधिक दुःखी हो जाते हैं। यदि भौतिकवाद एवं अध्यात्मवाद का मेल हो तो वस्तुओं का सदुपयोग एवं सत्य का साक्षात्कार हो जाये।

दो प्रकार की वस्तुएँ होती हैं : एक होती हैं स्थायी और दूसरी होती हैं परिवर्तनशील। मंच पर यह पुष्पमाला पड़ी है। एक सप्ताह पूर्व यह फूल की माला इस ढंग की नहीं थी। एक सप्ताह बाद भी यह इस तरह की नहीं रहेगी और अभी भी यह 'नहीं' की ओर ही जा रही है। ऐसे ही मनुष्य का शरीर भी इन फूलों की माला के समान ही है। ५०-१०० वर्ष पूर्व यह शरीर नहीं था और ५०-१०० वर्ष के बाद भी यह नहीं रहेगा। अभी भी यह 'नहीं' की ओर ही जा रहा है। एक-एक दिन करके आयुष्य का ह्रास हो रहा है, उमरिया घटती चली जा रही है।

कोई हमसे पूछे कि 'कैसे हो ?' तो हम कहते हैं कि 'जी रहे हैं।' हकीकत में हम जी नहीं रहे हैं, मर रहे हैं। कल हमारा जितना आयुष्य था, उतना आज नहीं है। आज के जितने श्वास गये उतने आयुष्य में से कट गये। चौबीस घंटों में हम २१,६०० श्वास खर्च करते हैं। इस तरह श्वासोच्छ्वास में हमारा आयुष्य कम हो रहा है। किसीकी ६० वर्ष की आयु हो और अभी उसकी उम्र ४५ वर्ष हो चुकी हो तो वह ४५ वर्ष जिया कि मरा ? हकीकत में तो वह ४५ वर्ष मरा और १५ वर्ष का ही जीवन शेष रहा। इस तरह हम हररोज मरते ही जा रहे हैं।

हकीकत में हम शरीर को 'मैं' मानते हैं तो प्रतिदिन मर रहे हैं, लेकिन हमें पता नहीं है कि असली

जीवन क्या है ? इस मरनेवाले शरीर को 'मैं' मानकर हम कहते हैं कि 'जी रहे हैं' लेकिन सच तो यह है कि हम हरदम मौत के करीब जा रहे हैं। हमारी मौत आये उसके पहले यदि अमर आत्मा को जान लें तो पता चलेगा कि हमारी मौत कभी होती ही नहीं, शरीर की मौत होती है, शरीर के कणों की मौत होती है। यह व्यवसायात्मिका बुद्धि के प्रभाव से जान सकते हैं। अपनेको न पहचानने के कारण हम इस जन्मने और मरनेवाले शरीर और इसके नाम को ही पक्का मान बैठते हैं। फलतः अपने वास्तविक स्वरूप तक पहुँचने से वंचित रह जाते हैं।

मरो मरो सब कोई कहे, मरना न जाने कोई।
एक बार ऐसा मरो कि, फिर मरना न होई॥

हम अपने अहंकार और अज्ञान को मार डालें तो ऐसी मृत्यु होगी कि फिर कभी मरना नहीं पड़ेगा। अमर जीवन के द्वार खुल जाएँगे। व्यवसायात्मिका बुद्धि का विकास होवे तो वह बुद्धि आत्मज्ञान की प्राप्ति में प्रीति कराती है तथा इन्द्रियगत ज्ञान मिथ्या व मायामात्र लगने लगता है। अव्यवसायात्मिका बुद्धि होने पर बुद्धि मन के साथ, मन इन्द्रियों के साथ तथा इन्द्रियाँ विषयभोगों के साथ जुड़कर संसार की मायाजाल में भटकाती हैं। अव्यवसायात्मिका बुद्धि से इन्द्रियगत ज्ञान में प्रीति होती है। इन्द्रियगत ज्ञान सच्चा ज्ञान नहीं है। जैसे, रस्सी में साँप और मरुभूमि में पानी दिखता है। सूर्य पृथ्वी से तेरह लाख गुना बड़ा है लेकिन हमें वह घर में पड़े हुए थाल जितना बड़ा दिखता है। इस प्रकार इन्द्रियगत ज्ञान मिथ्या व सीमित है। उस ज्ञान को सच्चा मानने से संसार की आसक्ति बढ़ती है।

यदिदं मनसा वाचा चक्षुर्भ्यां श्रवणादिभिः।
नश्वरं गृह्यमाणं च विद्धि माया मनोमयम्॥

जब तक अव्यवसायात्मिका बुद्धि में स्थिति होती है तब तक मनुष्य छोटी-छोटी बातों पर चिढ़ता, गुस्सा दिखाता व चिंतित होता रहता है। कभी हताशा, कभी निराशा, कभी पलायनवादिता आदि नकारात्मक विचारों के दलदल में धँसता रहता है। जबकि व्यवसायात्मिका बुद्धिवाले का निर्णय होता है कि :

तेरे फूलों से भी प्यार, तेरे काँटों से भी प्यार
जो भी देना चाहे, दे दे करतार...
चाहे सुख दे या दुःख, हमें दोनों है स्वीकार...

व्यवसायात्मिका बुद्धि के विकास के लिये जीवन में आनेवाले सुख-दुःख, अनुकूलता-प्रतिकूलता में सम रहें। फरियाद एवं चिंता के विचार न करें, न सुनें और न सुनायें। ऐसा करने से व्यवसायात्मिका बुद्धि खिलेगी और जीवन में सच्चे सुख का अनुभव होगा।

ज्ञानवान् महापुरुष

मानव के पास पाँच कलाएँ होती हैं और पाँच कलाएँ आत्म-साक्षात्कार के बाद मिलती हैं। फिर ऐसे महापुरुष दस योग्यताओं से संपन्न हो जाते हैं।

वे महापुरुष प्राणिमात्र से मित्रभाव रखनेवाले, सबके हितैषी, सुख-दुःख में सम, जगत को स्वप्नवत् जाननेवाले एवं आत्मा का हस्तामलकवत् ज्ञान रखनेवाले हो जाते हैं। ये पाँच कलाएँ जिनके पास बढ़ जाती हैं, उन्हें हम ज्ञानवान् कहते हैं, बुद्ध पुरुष कहते हैं, आत्म-साक्षात्कारी महापुरुष कहते हैं।

वे ही महापुरुष यदि योग-समाधि अधिक करते हैं तो उनमें अनेक रिद्धि-सिद्धियाँ भी आ जाती हैं। उनमें वेदों के ज्ञान की रक्षा करने की कुशलता व शक्ति, मरे हुए को जीवन देने का सामर्थ्य, पूर्ण ऐश्वर्य, पूर्ण यश, पूर्ण कीर्ति आदि छः भागवी कलाएँ आ जाती हैं, अतः हम उन्हें भगवान भी कहते हैं।

कर्म, उपासना और ज्ञान

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

अपने आत्मस्वभाव में आने के मार्ग पर चलने से मनुष्य का विकास होता है। अतः स्वात्मानुभव से तृप्त महापुरुषों द्वारा बताया गया मार्ग ही स्वाधीनता एवं विकास का मार्ग है।

विकास के तीन सोपान क्रमशः इस प्रकार हैं :

(१) निष्काम कर्म करके अंतःकरण को शुद्ध बनाते जाना।

(२) उपासना से विक्षेप दूर करना।

(३) ज्ञान से अज्ञान दूर करना।

अंतःकरण की मलिनता एवं अशुद्धता के कारण मनुष्य तंद्रा, आलस्य एवं भोग-विलास जैसे पापकर्मों की ओर प्रवृत्त होता है। बुद्धि में मोह-माया, राग-द्वेष, ईर्ष्या, मद, मत्सर आदि कचरे से भरे हुए तमसप्रधान मनुष्य की मनुष्यता मर चुकी होती है। इसके विपरीत, सत्कर्म करने से अंतःकरण की शुद्धि होती है। जैसे, जिन संबंधों से हम जुड़े हैं उन संबंधों से उत्पन्न हुए कर्त्तव्यों का पालन करना, सबके प्रति प्रेमपूर्ण व्यवहार करना एवं भ्रातृभाव रखना तथा नौकरी-धंधे में ईमानदारी रखना। ये सब करते हुए मन में यह समझ बनाये रखना कि 'आखिर ये सब मिटनेवाले देह के संगी हैं।' अतः कर्त्तव्यपालन में निष्काम भाव आता है। सत्संग एवं हरिकथा सुनने की ललक पैदा होती है। ये सब सत्कर्म कहे जाते हैं।

आत्मिक विकास का दूसरा सोपान है उपासना। जप, ध्यान, प्राणायाम आदि उपासना के अन्तर्गत आते हैं। नियमित रूप से प्राणायाम करने से, प्राणों की गति को एकाग्र होकर निहारने से प्राणों पर हमारा नियंत्रण स्थापित होता है एवं मन की चंचलता मिटती है। साधना के मार्ग में वात-पित्त-कफादि के विकारों से उत्पन्न शरीर का मोटापन, थकावट, आलस्य, निरुत्साह जैसे विघ्नरूप काँटे आते हैं, जिन्हें प्राणायाम से दूर किया जा सकता है।

प्राणायाम यानी सरल भाषा में कहें तो श्वासोच्छ्वास की गति पर नियंत्रण या उसकी तालबद्धता। श्वास की तालबद्धता में अथाह सामर्थ्य होता है, जो मन के दोषों को दूर करता है।

पहले के जमाने में लकड़ी के पुल होते थे। एक बार एक लकड़ी के पुल पर से सेना गुजर रही थी। लफ्ट... राईट... लेफ्ट... राईट... सैनिकों के कदमों की इस तालबद्धता से कंपनशक्ति पैदा हो रही थी जिससे लकड़ी के पुल पर से सेना का गुजरना भयप्रद बन गया। तब सेनानायक ने सब सैनिकों को आदेश दिया : ''ताल तोड़ दो।'' इस प्रकार ताल तोड़कर चलने पर सामर्थ्य कम हो जाने से वे आसानी से पुल पार कर सके।

श्वास की तालबद्धता से काम एवं क्रोध पर भी विजय प्राप्त की जा सकती है। जब क्रोध आ रहा हो तब प्राणों की गति को तालबद्ध करते जाओ। धीरे-धीरे मन शांत होता जायेगा और क्रोध भी शांत हो जायेगा। योगियों ने तो यहाँ तक कहा है कि यदि प्राणों पर पूरा प्रभुत्व पा लिया जाये तो अपनी इच्छा के अनुसार सूर्य और चंद्र को भी गेंद की नाईं घुमा सकते हैं। केवली कुंभक सिद्ध किये हुए व्यक्ति के समक्ष मनौती मानने से लोगों की मनोकामनाएँ भी पूरी होती हैं। इतना सामर्थ्य होता है प्राणायाम में।

जैसे, प्राणायाम तन की अशुद्धि और मन की चंचलता को मिटाकर मन को एकाग्र करने में सहायक होते हैं वैसे ही जप और ध्यान मन के विक्षेप को मिटाने में सहयोगी होते हैं।

मानसिक विक्षेप अर्थात् तमसप्रधान वृत्ति के

प्रभाव से मन में दुःख और चिन्ताएँ उत्पन्न होना। इस विक्षेप को दूर करने के लिए प्रत्येक मनुष्य तत्पर रहता है किन्तु योग्य साधन न मिलने पर अथवा उसमें रुचि न होने पर आध्यात्मिक मार्ग पर चलने के बजाय वह संसार के भोग-पदार्थों में सुख खोजने की गलती कर बैठता है और भटकता ही रह जाता है।

बिछुड़े हैं जो पियारे से
दर-बदर भटकते फिरते हैं।

सुख हमारी स्वाभाविक माँग है। जैसे, हमारे मुख में बत्तीस दाँत होते हैं। यदि कभी खाद्य पदार्थ का एक छोटा-सा तिनका भी उनमें फँस जाता है तो जीभ बार-बार वहीं मँडराती रहती है। जब तक किसी नुकीली चीज से उस तिनके को बाहर नहीं निकाला जाता, तब तक जीभ को शांति नहीं मिलती।

मुँह में स्थित बत्तीस दाँत जीभ को कभी परेशान नहीं करते क्योंकि उनका मुँह में होना स्वाभाविक है जबकि एक छोटा-सा तिनका जीभ को परेशान करता है क्योंकि दाँतों में उसका फँसना अस्वाभाविक है।

इसी प्रकार दुःख हमारे लिए अस्वाभाविक घटना है। हमारा वास्तविक स्वभाव ही सुखस्वरूप है, इसीलिए कोई भी मनुष्य दुःख नहीं चाहता। दुःख किसीको प्यारा नहीं होता।

राग-द्वेष, काम-क्रोधादि विक्षेपों को निकालने के लिए जप-कीर्तन एवं ध्यान का सहारा लेना चाहिए।

नियमित रूप से श्रद्धापूर्वक किये गये जप से मूलाधार, स्वाधिष्ठान, अनाहत आदि केन्द्रों में आंदोलन होता है। इससे मन शुद्ध होता है एवं एकाग्रता बढ़ती है। इस प्रकार मंत्रजाप अधिक होने से, मंत्र के अर्थ में धीरे-धीरे डूबने से अपने 'स्व' की स्मृति होने लगती है। हम आत्म-साक्षात्कार के निकट आने लगते हैं।

अधिक मंत्रजाप और शांत होने का अभ्यास करने से श्वासोच्छ्वास में स्वतः ही मंत्रजाप शुरू हो जाता है और स्व-स्वरूप के चिंतन में ध्यान लगने लगता है। फिर माला घुमाने की भी आवश्यकता नहीं रह जाती। किन्तु याद रहे : ध्यान में भी साधक को अपना लक्ष्य नहीं भूलना है। ध्यान-भजन में अगर लक्ष्य को भूल जायें तो लंबे श्वास लें। सावधान रहें कि निद्रा-तंद्रा-रसास्वाद में आप खो न जाएँ। निद्रा-तंद्रा-रसास्वाद होने पर साक्षीभाव में आने का प्रयास करें एवं जो होता है, उसे देखते जायें। साक्षीभाव में भी स्थिर न रहने के कारण कहीं मनोराज तो नहीं हो रहा, उस पर ध्यान रखें एवं गुरुमंत्र का उच्चारण करें।

धीरे-धीरे रजो-तमोगुण क्षीण होने से मन शांत होने लगेगा। फलस्वरूप ध्यान में आनंद आने लगेगा। चिंता, भय, शोक दूर होते जायेंगे और भीतर से प्रसन्नता सहज में महसूस होने लगेगी। सूक्ष्म जगत की अलौकिक दुनियाँ दिखने लगेगी। कभी-कभी अपने ही शरीर से पवित्र सुगंध आने लगेगी। इन अनुभवों से गुजरता हुआ साधक धीरे-धीरे आत्मविचार में, जगत के मिथ्यात्व के विचार में लीन रहने लगेगा।

आत्मविचार से इतनी प्रसन्नता मिलती है कि उस साधक की नींद बिल्कुल कम हो जाती है। उसे समाधि का सुख मिलने लगता है। हमारे शास्त्रों में तो यहाँ तक विवरण मिलता है कि कई योगी योगबल से हजारों वर्षों तक समाधि-सुख में ही लीन रहे हैं और रह सकते हैं। हजारों वर्षों तक मनुष्य नींद में नहीं रह सकता क्योंकि नींद तमस है और तमस से प्राप्त सुख अधिक नहीं टिक सकता।

जप, ध्यान, प्राणायाम - ये सब उपासना के ही विविध प्रकार हैं। अपने प्रेमास्पद इष्ट या गुरु के विरह में रोना भी उपासना है। इष्ट के चरित्र का श्रवण करना भी उपासना है। यदि किसीके इष्ट श्रीराम हैं तो उसके लिए श्रीरामचरित्र का श्रवण उपासना ही है। कीर्तन करते-करते, मन को इष्टाकार बनाते-बनाते, इष्ट के विरह में रोते-रोते, आनंद में नाचते-नाचते या ध्यान में शांतचित्त बैठे-बैठे भी उपासना ही होती है।

उन्नत उपासक अकेले में अपने इष्ट से बातें भी कर सकता है या व्यापक ब्रह्मतत्त्व में लीन होकर शरीर से पृथक् भी हो सकता है। संसार से वैराग्य

हो जाने पर उसे कोई कितने ही प्रलोभन दे फिर भी वह उन नाशवान् संबंधों या वस्तुओं आदि से आकर्षित नहीं होता। जैसे, नई-नई शादी करके आयी हुई लड़की ससुराल को ही अपना घर मानने लगती है। शादी के बाद थोड़े दिनों के लिए अपने पिता के घर आयी हुई उस लड़की से यदि कोई पूछे :

''यह तुम्हारा घर है क्या ?''

तो वह जवाब देगीं : ''नहीं नहीं, यह तो मेरा मायका है। मेरा घर तो अमुक जगह पर है।''

हालाँकि उसने बचपन से यौवन तक बीस वर्ष अपने पिता के घर गुजारे हैं किन्तु उसे वह अपने पिता का घर बताती है जबकि ससुराल में उसे एक साल भी नहीं हुआ फिर भी वह ससुराल को अपना घर बताती है।

इसी प्रकार उन्नत साधक भी इस संसार को अपना घर नहीं मानता। उसे संसार फीका लगने लगता है और वह आध्यात्मिक मार्ग में, अपने स्वस्वरूप को पाने में ही रुचि रखता है।

भोग भोगने से वह आनंद नहीं आता जो आनंद ध्यान के द्वारा, प्रेमाभक्ति के द्वारा आता है। ज्यों-ज्यों साधक को अंदर का आनंद मिलने लगता है, त्यों-त्यों संसार का आकर्षण छूटने लगता है। मन की चंचलता कम होने लगती है। बुद्धि का परिश्रम भी कम होने लगता है। बुद्धि स्थिर होने लगती है। फिर उसकी गति ज्ञानयोग में होने लगती है।

निष्काम कर्म और उपासना ज्ञान का पासपोर्ट देती है। लेकिन यदि किसीकी पूर्वजन्म की साधना हो या उत्तम बुद्धि हो एवं उसकी किसी समर्थ गुरु में पूर्ण श्रद्धा हो तो वह सीधा ज्ञान के मार्ग पर भी आगे निकल सकता है। राजा जनक सीधे ज्ञानमार्ग पर चल पड़े थे और उन्होंने आत्मज्ञान प्राप्त कर लिया था।

अंत में, इतना ही कहना है कि जिसे जो मार्ग जमे, वह उसी मार्ग पर आगे चलता जाये तो आखिर में लक्ष्यप्राप्ति हो ही जाएगी। जो कर्मकाण्ड में रुचि रखते हैं, वे कर्मकाण्ड एवं प्राणोत्थान में और आगे बढ़ें तथा ऐसे ही लोगों का संग करें। जो उपासना में दृढ़ बुद्धि करके आगे बढ़ना चाहते हैं वे उपासक, उपासना से च्युत हों - ऐसे लोगों का संग न करके श्रद्धावान् मनुष्यों का ही संग करें तो उन्नत हो जायेंगे।

कहने का तात्पर्य यह है कि आप जिस किसी भी आध्यात्मिक मार्ग पर लगे हो, उसी मार्ग पर तत्परता से लगे रहो और कुसंग से बचते रहो। मन की लगाम को अगर थोड़ी-सी भी ढील दी तो दबे हुए विकारों को सहयोग मिल जायेगा। इसलिए इस मन को तमस से बचाकर, विषय-विकारों से बचाकर इष्ट की ओर, संतों की ओर, सत्संग की ओर, सेवा की ओर तथा उपासना की ओर बढ़ाते जाना चाहिए।

किसी भी साधन से अपना आत्मिक विकास करके अपने आत्मस्वभाव में स्थित हो जाओ। जन्म-मरण, दुःख-अशांतिरूपी काँटों को कर्म, उपासना और ज्ञान से निकालकर निर्दुःख हो जाओ, मुक्त हो जाओ, स्वतंत्र हो जाओ।

हरि ॐ... ॐ... ॐ... हरि ॐ...ॐ.. ॐ...

पूजन किया जाता है।

आपका वित्त आपको बाँधनेवाला न हो, आपका धन आपकी आयकर भरने की चिन्ता को न बढ़ाये, आपका वित्त आपको विषय-विकारों में न गिरा दे, इसीलिए दीपावली की रात्रि को लक्ष्मीजी का पूजन किया जाता है। लक्ष्मी आपके जीवन में महालक्ष्मी होकर आये। वासनाओं के वेग को जो बढ़ाये वह वित्त है और वासनाओं को श्रीहरि के चरणों में पहुँचाये वह महालक्ष्मी है। नारायण में प्रीति करवानेवाला जो वित्त है, वह है महालक्ष्मी।

नूतन वर्ष : दीपावली वर्ष का आखिरी दिन है और नूतन वर्ष प्रथम दिन है। यह दिन आपके जीवन की डायरी का पन्ना बदलने का दिन है।

दीपावली की रात्रि में वर्षभर के कृत्यों का सिंहावलोकन करके आनेवाले नूतन वर्ष के लिए शुभ संकल्प करके सोयें। उस संकल्प को पूर्ण करने के लिए नववर्ष के प्रभात में अपने माता-पिता, गुरुजनों, सज्जनों, साधु-संतों को प्रणाम करके एवं अपने सद्गुरु के श्रीचरणों में जाकर नूतन वर्ष के नये प्रकाश, नये उत्साह और नई प्रेरणा के लिए आशीर्वाद प्राप्त करें। जीवन में नित्य निरंतर नवीन रस, आत्मरस, आत्मानंद मिलता रहे, ऐसा अवसर जुटाने का दिन है नूतन वर्ष।

भाईदूज : उसके बाद आता है भाईदूज का पर्व। दीपावली के पर्व का पाँचवाँ दिन। भाईदूज भाइयों की बहनों के लिए एवं बहनों की भाइयों के लिए सद्भावना बढ़ाने का दिन है।

हमारा मन एक कल्पवृक्ष है। मन जहाँ से फुरता है, वह चिद्घन चैतन्य सच्चिदानंद परमात्मा सत्यस्वरूप है। हमारे मन के संकल्प आज नहीं तो कल सत्य होंगे ही। किसीकी बहन को देखकर यदि मन में दुर्भाव आया हो तो भाईदूज के दिन उस बहन को अपनी ही बहन माने और बहन भी 'पति के सिवाय सब पुरुष मेरे भाई हैं' यह भावना विकसित करे और भाई का कल्याण हो- ऐसा संकल्प करे। भाई भी बहन की उन्नति का संकल्प करे। इस प्रकार भाई-बहन के परस्पर प्रेम और उन्नति की भावना को बढ़ाने का अवसर देनेवाला पर्व है भाईदूज।

जिसके जीवन में उत्सव नहीं है, उसके जीवन में विकास भी नहीं है। जिसके जीवन में उत्सव नहीं है, उसके जीवन में नवीनता भी नहीं है। जिसके जीवन में उत्सव नहीं है, वह आत्मा के करीब भी नहीं है।'

भारतीय संस्कृति के निर्माता ऋषिजन कितने दूरदृष्टिवाले रहे होंगे! महीने में एक-दो दिन अथवा वर्ष में एक-दो दिन आदेश देकर कोई काम मनुष्य के द्वारा करवाया जाये, उससे मनुष्य का विकास संभव नहीं है। परन्तु मनुष्य यदा-कदा अपना विवेक जगाकर उल्लास, आनंद, प्रसन्नता, स्वास्थ्य और स्नेह के गुण विकसित करे तो उसका जीवन विकसित हो सकता है। मनुष्य-जीवन का विकास करनेवाले ऐसे पर्वों का आयोजन करके जिन निर्माताओं ने हमारे समाज का निर्माण किया है, उन निर्माताओं को मैं सच्चे हृदय से वंदन करता हूँ...

अभी कोई भी ऐसा धर्म नहीं है जिसमें इतने सारे उत्सव हों, एक साथ इतने सारे लोग ध्यानमग्न हो जाते हों, समाधिस्थ हो जाते हों, कीर्तन में झूम उठते हों। जैसे, स्तंभ के बगैर पाण्डाल नहीं रह सकता, वैसे ही उत्सव के बिना धर्म विकसित नहीं हो सकता। जिस धर्म में खूब-खूब अच्छे उत्सव हैं, वह धर्म सनातन धर्म है। सनातन धर्म के बालकों को अपनी सनातन वस्तु प्राप्त हो, उसके लिए उदार चरित्र बनाने का जो काम है वह पर्वों, उत्सवों और सत्संगों के आयोजनों द्वारा हो रहा है।

पाँच पर्वों के पुंज इस दीपावली महोत्सव को लौकिक रूप से मनाने के साथ-साथ हम उसके आध्यात्मिक महत्त्व को भी समझें, यही लक्ष्य हमारे पूर्वज ऋषि-मुनियों का रहा है।

इस पर्वपुंज के निमित्त ही सही, अपने ऋषि-मुनियों के, संतों के, सद्गुरुदेव के दिव्य ज्ञान के आलोक में हम अपना अज्ञानांधकार मिटाने के मार्ग पर शीघ्रता से अग्रसर हों- यही इस दीपमालाओं के पर्व दीपावली का संदेश है।

आप सभी को दीपावली हेतु खूब-खूब बधाइयाँ... आनंद ही आनंद... मंगल ही मंगल...

*

पर्वों का पुंज : दीपावली

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

उत्तरायण, शिवरात्रि, होली, रक्षाबन्धन, जन्माष्टमी, नवरात्रि, दशहरा आदि त्यौहारों को मनाते-मनाते आ जाती है पर्वों की हारमाला- दीपावली। पर्वों के इस पुंज में ये पाँच दिन मुख्य हैं : धनतेरस, कालीचौदस, दीपावली, नूतन वर्ष और भाईदूज। धनतेरस से लेकर भाईदूज तक के पाँच दिन आनंद और उत्सव मनाने के दिन हैं।

शरीर को रगड़-रगड़कर स्नान करना, नये वस्त्र पहनना, मिठाइयाँ खाना, नूतनवर्ष का अभिनंदन देना-लेना, भाइयों के लिए बहनों में प्रेम और बहनों के प्रति भाइयों द्वारा अपनी जिम्मेदारी स्वीकार करना, ऐसे पाँच दिनों के उत्सवों का नाम है दीपावली पर्व।

धनतेरस : धन्वंतरि महाराज खारे-खारे सागर में से औषधिरूप अमृत लेकर प्रगट हुए थे। आपका जीवन भी औषधियों के द्वारा शारीरिक स्वास्थ्य-संपदा से समृद्ध हो सके, ऐसी स्मृति देता हुआ जो पर्व है वही है धनतेरस। यह पर्व धन्वंतरि द्वारा प्रणीत आरोग्यता के सिद्धान्तों को अपने जीवन में अपनाकर सदैव स्वस्थ एवं प्रसन्न रहने का संकेत देता है।

काली चौदस : धनतेरस के पश्चात् आती है नरक चतुर्दशी (काली चौदस)। भगवान श्रीकृष्ण ने नरकासुर को क्रूर कर्म करने से रोका। उन्होंने सोलह हजार कन्याओं को उस दुष्ट की कैद से छुड़ाकर उन्हें अपनी शरण दी और नरकासुर को यमपुरी पहुँचाया। नरकासुर प्रतीक है वासनाओं के समूह एवं अहंकार का। जैसे श्रीकृष्ण ने उन कन्याओं को अपनी शरण देकर नरकासुर को यमपुरी पहुँचाया, वैसे ही आप भी अपने चित्त में विद्यमान नरकासुररूपी अहंकार एवं वासनाओं के समूह को श्रीकृष्ण के चरणों में समर्पित कर दो, ताकि आपका अहं यमपुरी पहुँच जाये और आपकी असंख्य वृत्तियाँ श्रीकृष्ण के आधीन हो जायें। ऐसा स्मरण कराता हुआ पर्व है नरकचतुर्दशी।

इन दिनों में अंधकार में उजाला किया जाता है। हे मनुष्य ! अपने जीवन में चाहे जितना अंधकार दिखता हो, चाहे जितना नरकासुर अर्थात् वासना एवं अहं का प्रभाव दिखता हो, आप अपने आत्मकृष्ण को पुकारना। श्रीकृष्ण रुक्मिणी को आगेवानी देकर अर्थात् अपनी ब्रह्मविद्या को आगे करके नरकासुर को ठिकाने लगा देंगे।

स्त्रियों में भी कितनी शक्ति है ! नरकासुर के साथ केवल श्रीकृष्ण लड़े हों, ऐसी बात नहीं है। श्रीकृष्ण के साथ रुक्मिणीजी भी थीं। सोलह-सोलह हजार कन्याओं को वश में करनेवाले श्रीकृष्ण को एक स्त्री (रुक्मिणी) ने वश में कर लिया। नारी में कितनी अद्भुत शक्ति है ! इसकी याद दिलाते हैं श्रीकृष्ण।

दीपावली : फिर आता है जगमग दीपों का त्यौहार। दीपावली की रात्रि को सरस्वतीजी और लक्ष्मीजी का पूजन किया जाता है। ज्ञानीजन अखूट धन की प्राप्ति को लक्ष्मी नहीं, वित्त मानते हैं। वित्त से आपको बड़े-बड़े बंगले मिल सकते हैं, शानदार महँगी गाड़ियाँ मिल सकती हैं, आपकी लंबी-चौड़ी प्रशंसा हो सकती है परन्तु आपके अंदर परमात्मा का रस नहीं आ सकता। इसीलिए दीपावली की रात्रि को सरस्वतीजी का भी पूजन किया जाता है, जिससे लक्ष्मी के साथ-साथ आपको विद्या भी मिले। वह विद्या भी केवल पेट भरने की विद्या नहीं वरन् वह विद्या कि जिससे आपके जीवन में मुक्ति के पुष्प महकें। **सा विद्या या विमुक्तये।** ऐहिक विद्या के साथ-साथ ऐसी मुक्तिप्रदायक विद्या, ब्रह्मविद्या आपके जीवन में आये, उसके लिए सरस्वतीजी का
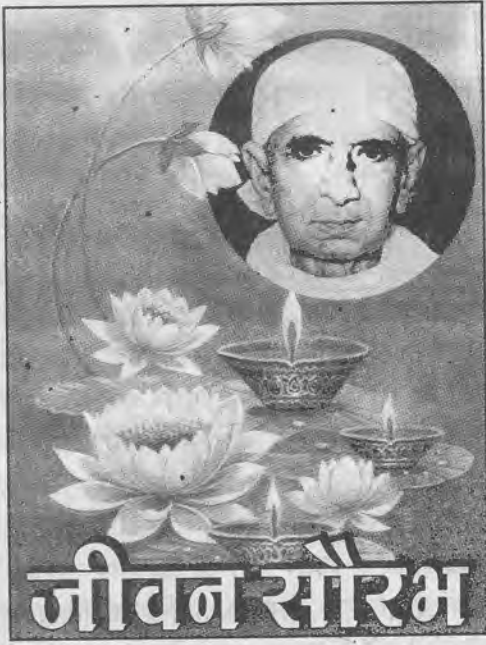
योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

(गतांक का शेष)

उस समय सिनेमा के विरुद्ध आचार्य विनोबा भावे, आचार्य राजगोपालाचार्य एवं देश के दूसरे आगेवानों ने प्रचार किया। पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज ने गीताप्रेस, गोरखपुर की ओर से सिनेमा के विरुद्ध छपी हुई हिन्दी पुस्तकों का सिंधी भाषा में भाषान्तर करवाकर १०,००० प्रतियाँ लोगों तक पहुँचायीं। उन्होंने बहनों एवं बच्चियों को चमकते आभूषण, जवाहरात एवं फैशनवाले कपड़े पहनना छोड़कर सादगी अपनाने के लिए कहा।

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज को अपनी मातृभाषा सिंधी के लिए अत्यंत प्रेम था। मुगलों एवं अंग्रेजों के शासन के दौरान लुप्त बनी हुई सिंधी भाषा के पुनरुत्थान के लिए उन्होंने काफी परिश्रम किया। अंग्रेजी भाषा के प्रभाव में आकर सिंधी बच्चे अपनी मातृभाषा सिंधी से विमुख हो रहे थे। उस समय सिंधी समाज को सावधान करने के लिए उन्होंने जो कहा था वह सिंधी भाई-बहनों के लिए आत्मसात् करने योग्य है। सिंधी भाषा की महत्ता बताते हुए उन्होंने कहा था :

''मैं सिंधी भाषा पर इसलिए कुर्बान हूँ कि सिंधी भाषा में जो विविधता है ऐसी विविधता आपको और किसी भाषा में मिलेगी नहीं। इसमें पारसी, गुजराती, हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी जैसी अनेक भाषाओं का समन्वय हुआ है। मानो सात नदियाँ मिलकर बनी हुई एक सिंधु नदी। सिंधी भाषा एक गुलदस्ते जैसी है। इसमें सब भाषाओं के शब्द एक-एक पुष्प का रूप धारण करके आये हैं।''

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज की दीर्घ दृष्टि ने यह देख लिया कि सिंधी समाज में उल्टी गंगा बह रही है। सिंधी समाज तेजी से जिस ओर विकसित हो रहा है उस पर आगे यदि बाँध न बाँधा गया तो उसका नामो-निशान नहीं रह पायेगा।

सिंधी लोग तभी सिंधी कहे जायेंगे, जब वे लोग सिंधी भाषा बोलेंगे। प्रत्येक जाति अपनी मातृभाषा के कारण ही अपना अस्तित्व बनाये रखती है। अगर ये लोग अपनी मातृभाषा ही भूल जायेंगे तो इन लोगों की हस्ती ही न बचेगी।

उन्होंने देखा कि सिंधी लोग अपनी मातृभाषा भूलते जा रहे हैं। अतः उन्होंने एक जबरदस्त आंदोलन शुरू किया कि सिंधी भाषा सीखो, बोलो और लिखो। याद रखो कि सिंधी कोई खराब भाषा नहीं है। सिंधी तो मूल संस्कृत की भाषा है। इसमें संस्कृत भाषा की कितनी विलक्षणताएँ समायी हुई हैं ! उन्होंने सिंधी भाषा में लिखी गयी असंख्य पुस्तकें पढ़ने का निर्देश दिया।

इस प्रकार पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज ने सिंधियों के प्रत्येक क्षेत्र पर बारीकी से ध्यान देकर जहाँ त्रुटियाँ लगीं वहाँ सुधार करवाये।

उन्होंने देखा कि देश में अराजकता एवं अशांति फैल रही है। धर्म के नाम पर अधर्म का प्रचार हो रहा है, पाखंड बढ़ता जा रहा है एवं सिंधी लोग अपने धर्म, सभ्यता एवं संस्कृति को भूलते जा रहे हैं।

विधर्मी लोग भोलेभाले लोगों को धर्म के नाम पर हिन्दू धर्म से भ्रष्ट करते जा रहे हैं। चारों तरफ रोज नये-नये पंथ निकलते जा रहे हैं। कई लोग अपनेको भगवान के नाम से विख्यात करके अपनी पेटपूजा करते हैं। बड़े-बड़े मठ-मंदिर बनवाते जाते हैं। ऐसे लोग भोले हिन्दुओं से कहते :

''तुम हमारे पास से मंत्रदीक्षा ग्रहण करो। हम तुम्हें मोक्ष दिलवा देंगे। तुम्हें एक क्षण में भगवान के दर्शन करवा देंगे।''

ऐसे पाखंडी लोग भोली माताओं एवं बहनों को बहकाकर, उन्हें अपने धर्म से विमुख करके गुमराह करते थे। उन लोगों के विरुद्ध पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज नवयुवकों को समझाते :

''युवानों ! जागो। पाखंडियों का भांडा फोड़ दो। उन लोगों की बुरी नजर तुम्हारे पर है। तुम स्वयं ही अपने-आपका उद्धार कर सकते हो। अपनी माता एवं बहनों को विधर्मियों से बचाओ।''

उन्होंने स्पष्टतापूर्वक कहा :

''तुम्हें गुरु नहीं तारेंगे, वरन् तुम्हें स्वयं ही तरना होगा। गुरु तुम्हें केवल मार्ग बतायेंगे। चलकर तो तुम्हें स्वयं ही पहुँचना होगा।''

जिज्ञासुओं से वे कहते :

''षट्संपत्ति धारण करके परमात्मा के विषय में श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन करते रहो। अपने आचार-विचार, व्यवहार एवं आहार को शुद्ध रखो।''

संसारियों से वे कहते :

''संसार की मायाजाल से अपनेको छुड़ाकर परमार्थ के मार्ग पर चलोगे तभी सच्चा आनंद एवं सच्चा सुख प्राप्त कर सकोगे। मंदिर और मस्जिद में जाकर, सिर नवाकर, पोथियाँ पढ़कर, किसीके पैर दबाकर या पंखा झलकर तुम्हारा उद्धार नहीं होनेवाला है, वरन् दैवी गुणों को धारण करके, संत-समागम एवं सत्शास्त्रों का पठन करके तुम्हारा जीवन सफल होगा। जीवमात्र में परमात्मा के दर्शन करो।''

मूक प्राणियों के लिए भी उनका दिल रो पड़ता। कुत्ते, बिल्ली या किसी भी प्राणी की पीड़ा को वे सहन नहीं कर सकते थे। एक बार एक कुत्ते के पैर को घायल देखकर उन्होंने उसकी मालिश करके दवा लगाकर उपचार किया। लोगों को भी मूक प्राणियों को मारकर उनके मांस जैसा तामसी आहार न खाने की सलाह देते और कहते :

''जिन जीवों को मारकर तुम खाते हो, उनमें भी तुम्हारी ही तरह प्राण हैं। मांस, अण्डे, मछली आदि खाकर अपने पेट को स्मशान मत बनाओ। ऐसा आहार करने से विचार विकृत एवं मलिन होते हैं।''

उन्होंने बाल्यकाल में कोई ऐहिक शिक्षा नहीं ली थी फिर भी वे ज्ञान के सागर थे। धन-संपत्ति तो उनके पैर पखारती थी। वे धन के दास नहीं परंतु धन के स्वामी बने। श्रद्धालु, सज्जन एवं भक्तजन जो भी दान-दक्षिणा उनके श्रीचरणों में रखते, उसे वे अपने पास नहीं रखते थे बल्कि दरिद्र लोगों, विधवाओं, गरीब विद्यार्थियों, बीमारों के लिए एवं दूसरे जरूरतमंद लोगों की सहायता आदि लोकोपकारी कार्यों के लिए दे देते।

उनके भक्तों ने साथ मिलकर जिन धर्मशालाओं, स्कूलों एवं आश्रमों आदि का निर्माण किया, उन्हें वे ट्रस्टियों के हवाले करते गये। इस प्रकार वे हमेशा विरक्त एवं निर्लेप नारायण होकर ही रहे।

वे हमेशा अपने रचे हुए गीत की निम्नलिखित पंक्तियाँ गुनगुनाते एवं अपने श्रोताओं को सुनाते :

चार दिन की जिंदगानी में...
तन से, मन से हमेशा के लिए
रहता नहीं इस दारे फानी में।
कुछ अच्छा काम कर लो
चार दिन की जिंदगानी में॥
तन से सेवा करो जगत की
मन से प्रभु के हो जाओ।
शुद्ध बुद्धि से तत्त्वनिष्ठ हो
मुक्त अवस्था को तुम पा लो ॥

इस प्रकार उनका पूरा जीवन परोपकारमय था। उनकी नस-नस में परहित की भावना के सिवाय कुछ न था। उनका जीवन-संदेश था :

''जब तक शरीर में प्राण हैं तब तक भलाई के कार्य करते रहो।''

अलग-अलग क्षेत्रों में उन्होंने अनेकों लोककल्याण के कार्य किये किन्तु कर्त्तापने का भाव न रखा। वे नम्रता एवं निष्कामता की साक्षात् प्रतिमा थे। वे हमेशा कहते :

''अलग-अलग जगहों पर कोई महान् शक्ति द्वारा ये कार्य होते हैं। लीला तो कुछ भी नहीं करता।''

वे हमेशा शरीर पर खादी का कुर्त्ता पहनते, सिर पर सूती खादी का टुकड़ा बाँधते एवं नीचे कच्छा पहनते। प्रातःकाल उठकर आसन-प्राणायाम करते, पंचदशी जैसे ग्रंथ को किसी साधक द्वारा पढ़वाते और आसन करते-करते सुनते। आसन करने के बाद स्वास्थ्य के लिए हितकारी सेवफल लेते जो कि दिल-दिमाग को शक्ति देनेवाला है। चाय-कॉफी जैसे पेय से दूर रहने की प्रेरणा भी देते।

दोपहर को सादा भोजन चबा-चबाकर खाते। शाम को मोसम्मी का रस या बादाम की ठंडाई लेते। शरीर के स्वास्थ्य के लिए जो वस्तुएँ अनुकूल न होतीं, उन्हें कभी न खाते।

पाठक भी ऐसा नियम लें तो कितना अच्छा !

सोने के लिए नरम बिस्तर का उपयोग न करते। भूमि पर केवल बोरा बिछाकर अथवा बिस्तर पर बोरा बिछाकर सो जाते। अपने सभी काम स्वयं ही करते। वे हमेशा कहते : ''गुदड़ी मेरे कंधे पर और रोटी राज्य पर है।''

उनका शरीर एकदम हल्का फूल जैसा था। उनके शरीर में हमेशा खूब स्फूर्ति रहती। वे ८० वर्ष की उम्र में भी जब चलते तब उनके साथ के नौजवानों को दौड़ना पड़ता। बड़ी उम्र होने पर भी कठिन-से-कठिन आसन को भी वे बड़ी सरलता से कर लेते और लोगों को भी उसे करने की प्रेरणा देते। उनमें हमेशा जवानी का जोश झलकता था। (क्रमशः)

लोकसंग्रह

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

मनुष्य योनि को 'कर्मासक्त' योनि कहते हैं, 'कर्मसंगी' कहते हैं। किन्तु ये कर्म जब भगवान की प्रीति के लिए किये जाते हैं तब यही मनुष्य योनि 'ईश्वरसंगी' हो जाती है, 'ब्रह्मसंगी' हो जाती है।

साधारण आदमी के कर्म फलेच्छा से प्रेरित होते हैं लेकिन जो बुद्धिमान, विवेकी और वैराग्यवान् हैं उनके कर्म जनकल्याण के व्यापक उद्देश्य को लेकर होते हैं। उनका उद्देश्य होता है लोक में मुक्ति, शांति और माधुर्य की प्रस्थापना करना। भगवान श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता के तीसरे अध्याय के २० वें श्लोक में कहा है :

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि ॥

'राजा जनक जैसे अनेक महापुरुषों ने भी कर्म के द्वारा परम सिद्धि को प्राप्त किया है। इसलिए लोक-संग्रह को देखते हुए भी तू निष्कामभाव से कर्म करने के योग्य है।' **(गीता : ३.२०)**

लोकसंग्रह का मतलब है जिस आचरण से लोग नीति, मर्यादा और धर्म-कर्म के रास्ते चलें एवं उनका जीवन उन्नत हो, ऐसे कर्म करना। भीड़संग्रह और लोकसंग्रह दोनों भिन्न-भिन्न चीजें हैं। रजोगुणी-तमोगुणी आदमी को जो लोकसंग्रह दिखता है वह भीड़संग्रह है लेकिन सत्पुरुषों का जो भीड़संग्रह प्रतीत होता है, वह वस्तुतः लोकसंग्रह है। लोग प्रेम के

रास्ते, प्रेमाभक्ति के रास्ते, सदाचार के रास्ते चलें, उनके दुर्गुण-दुराचार कम होते जायें एवं सद्गुण-सदाचार बढ़ते जायें, वे सुखी जीवन, स्वस्थ जीवन एवं सम्मानित जीवन जीने में सफल हों इस भावना से, उसके उद्देश्य के अनुरूप जो कर्म किये जाते हैं वे कर्म निष्काम कर्म माने जाते हैं और ऐसे निष्काम कर्म पारमार्थिक उद्देश्य की पूर्ति करवा देते हैं।

सांसारिक फल की प्राप्ति नश्वर है किन्तु पारमार्थिक उद्देश्य की प्राप्ति शाश्वत है। मनुष्यमात्र का उद्देश्य, जीवमात्र का उद्देश्य मुक्ति है। अगर वह मुक्त नहीं हुआ तो फिर कितने भी सांसारिक फल उसे मिल जायें, वे सब मिट जायेंगे। यदि पारमार्थिक उद्देश्यपूर्ति नहीं हुई तो फिर जीव भटक जायेगा।

निष्काम पुरुष के कर्म पारमार्थिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए होते हैं जबकि सकामी पुरुषों के कर्म सांसारिक फल की प्राप्ति के लिए होते हैं। लोगों को सत्य की ओर उन्मुख करनेवाले कर्म यज्ञार्थ कर्म कहे जाते हैं, ईश्वरप्रीत्यर्थ कर्म कहे जाते हैं।

प्रेम निराकार है और प्रेम की अभिव्यक्ति सेवा साकार है। साकार की सेवा करने से निराकार प्रेम पुष्ट होता है और निराकार प्रेम के प्रभाव से साकार की सेवा किये बिना नहीं रहा जाता है। शिवजी को आपके एक लोटा जल व दो बिल्वपत्र की जरूरत नहीं है लेकिन आपके हृदय में जो प्रेम है शिवजी के लिए उस निराकार प्रेम को साकार करने के लिए पानी की धारा, अबीर, गुलाल, बिल्वपत्र, धूप-दीपादि की जरूरत पड़ती है। भगवान के प्रति अपने प्रेम को साकार करने के लिए पूजा की जरूरत है। किन्तु इससे ईश्वर को क्या मिलेगा ? क्या लाभ होगा ?

अगर ज्ञान का मार्ग मिल जाता है तो फिर इन पूजनादि सामग्रियों की जरूरत नहीं पड़ती है। नर में जो नारायण छिपा हुआ है, उसकी प्रीति के लिए जो कर्म किये जाते हैं, उन कर्मों में पूजा-पाठ में प्रयुक्त होनेवाले अधिक विधि-विधानों और सामग्रियों की जरूरत नहीं पड़ती है। उसमें शुभ भावना और शुभ प्रवृत्ति की ही आवश्यकता होती है, जो मनुष्य को उस शुभस्वरूप की ओर ले जाती है।

चैतन्य महाप्रभु का यह उद्देश्य था कि लोकसंग्रह हो। वे बंगाल के एक छोटे-से कस्बे में पहुँचे और उन्होंने लोगों से पूछा : ''यहाँ सबसे अधिक खतरनाक व्यक्ति कौन है ?''

तब लोगों ने कहा : ''मघई है, मघई।''

गौरांग : ''जाओ, उसे बुला लाओ।''

लोग : ''महाराज ! वह तो दिनभर शराब पीता रहता है, गालियाँ बकता रहता है और साधु-संतों को नहीं मानता है।''

गौरांग : ''कोई बात नहीं। हमें तो ईश्वर के निराकार प्रेम को साकार करना है, लोकसंग्रह करना है। जाओ, उसको बुला लाओ।''

गौरांग की आज्ञा को शिरोधार्य करके उनका एक सेवक मघई को बुलाने गया। जब वह मघई के घर पहुँचा तो देखा कि मघई पानी की तरह शराब पी रहा था। सेवक ने नशे में धुत्त मघई को कहा :

''चलो, आपको मेरे गुरुजी बुला रहे हैं।''

इतना सुनते ही मघई ने पास में पड़ी शराब की बोतल उस सेवक के माथे पर दे मारी और गौरांग के लिए खूब गालियाँ बकने लगा। सेवक के माथे से रक्त की धारा बह चली। वह सेवक वापस गौरांग के पास आकर बोला :

''प्रभु ! मैंने जाकर मघई से कहा 'चलो, तुझे प्रभु याद कर रहे हैं तो उसने आपके लिए बहुत गालियाँ बकी और साथ ही शराब की बोतल से मेरे मस्तक पर प्रहार किया जिससे यह रक्त बह चला है।''

गौरांग ने उस सेवक की मलहम-पट्टी आदि करके दूसरे कुछ सेवकों को आदेश दिया : ''जाओ, तुम लोग उस मघई को ले आओ। यदि प्रेम से आता है तो ठीक है, नहीं तो बलप्रयोग करके भी ले आओ।''

आठ-दस सेवक गये उस शराबी के पास और उसे जबरदस्ती पकड़कर चैतन्य महाप्रभु के पास ले आये। चैतन्य महाप्रभु ने सेवकों को जमीन पर गद्दे बिछाकर उस पर मघई को लिटाने के लिए कहा।

अब तो वह शराबी यह देखकर और घबराया कि 'शायद गद्दे पर लिटाकर मेरी पिटाई करेंगे।'

चैतन्य महाप्रभु की आज्ञानुसार उस शराबी को

गद्दे पर लिटाया गया। वह शराबी तो था ही और साथ ही थका हुआ भी था। अतः गुदगुदे बिस्तर पर लेटते ही उसे नींद आने लगी। चैतन्य महाप्रभु धीरे-से उसके पैरों की ओर जा बैठे एवं अपने कोमल करकमलों से उसकी पैरचंपी करने लगे।

वह शराबी भयभीत होकर उठ बैठा और सोचने लगा : 'न जाने अब ये क्या करेंगे !' किन्तु जैसे ही उसकी नजर गौरांग पर पड़ी तो वह दंग रह गया :

'ओह ! ये तो चैतन्य महाप्रभु स्वयं मेरे पैर सहला रहे हैं !'

वह हैरान होकर बोल उठा : ''महाराज ! मैं शराबी हूँ। मैंने आपके एक शिष्य के मस्तक पर दारू की बोतल से प्रहार करके उसको लहूलुहान कर दिया था। फिर भी आप यह क्या कर रहे हैं ? आप मेरी पैरचंपी कर रहे हैं ! मुझे सजा दे रहे हैं या कुछ और ? मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा है।''

चैतन्य महाप्रभु : ''नहीं नहीं, तू तो बहुत अच्छा है। तुझमें कितना प्राणबल है ! उस प्राणबल को तू केवल ईश्वर की तरफ मोड़ दे, यही मेरी प्रार्थना है।''

चैतन्य महाप्रभु के उदार स्वभाव को देखकर, उनके दर्शन और स्पर्श को पाकर उस शराबी का स्वभाव इतना बदल गया कि आगे चलकर गौरांग के प्रमुख शिष्यों में उसका स्थान बन गया।

यह है लोकसंग्रह। चैतन्य महाप्रभु ने यह नहीं सोचा कि 'उसने क्या दिया ? अपना क्या जाता है ?' यह नहीं, अपितु 'अपना उद्देश्य क्या है ?' यह सोचकर गौरांग ने उसका कल्याण करने का प्रयास किया और एक महापापी, महाशराबी में से एक भगवद्भक्त का निर्माण कर दिया। आज भी लोग गौरांग की करुणा एवं उदारता को याद करके धन्य हो उठते हैं।

जो लोग पदों के पीछे, प्रतिष्ठा के पीछे पड़ते हैं वे अपना पारमार्थिक उद्देश्य खो बैठते हैं। 'हमारा नाम होना चाहिए... हमारी इज्जत होनी चाहिए...' ऐसा सोचकर जो कर्म करते हैं उससे मान-बड़ाई तो मिलती है किन्तु वह यश, वह मान-बड़ाई सब नश्वर होता है। लेकिन वे ही कर्म यदि ईश्वरप्रीत्यर्थ किये जायें तो न चाहने पर भी नाम और यश पीछे-पीछे दौड़े चले आते हैं। यश की चाहना न रखने से तो हृदय में हृदयेश्वर का ही सुख अधिकाधिक प्रगटने लगता है... अद्भुत आनंद उभरने लगता है... नित्य नवीन प्रेम निखरने लगता है।

आप यदि सेवा का बाह्य फल चाहते हैं तो समझ लेना कि आप सेवा को बेच रहे हैं, सेवा को फुटपाथी बना रहे हैं। किन्तु इसके विपरीत आप जितना ही अधिक ईश्वरप्रीत्यर्थ कर्म और सेवा करते हैं, उतना ही आपका हृदय सुख-शांति और सद्गुणों से भरता व पुष्ट होता है।

वह शराबी मघई क्या दे सकता था गौरांग को ? किन्तु ऐसे महापापी को भी जब वहाँ के लोगों ने एक भगवद्भक्त के रूप में परिवर्तित होते देखा तो वे सभी सहज में ही गौरांग के चरणों में झुक गये और सन्मार्ग पर चलने लगे। यह लोकसंग्रह का एक जीवंत उदाहरण है।

महापुरुषों ने इसी प्रकार लोकसंग्रहार्थ कर्म करके न जाने कितनों का कल्याण किया, कितनों का उद्धार किया और आज भी कर रहे हैं।

कोई सेवा छोटी नहीं है। बस, सावधानी इतनी ही रखनी है कि ईश्वरप्रीत्यर्थ सेवा करें। अपने अहं के पोषण के लिए नहीं, वरन् अहं को ईश्वर के चरणों में मिटाने के लिए सेवा करें। जहाँ अहं के पोषण हेतु सेवा की जाती है वहीं कलह, अशांति और लड़ाई-झगड़े होते हैं, तनाव और ईर्ष्या होती है, मानवता को कलंकित करनेवाले कर्म और भाव उत्पन्न हो जाते हैं। लेकिन जहाँ ईश्वरप्रीति है, अहं को सर्जित नहीं बल्कि विसर्जित करने का उद्देश्य है वहाँ शांति, प्रेम और सौहार्द्र अपने-आप प्रगट हो जाता है।

बीज विसर्जित होता है तो वृक्ष बनता है। ऐसे ही जीव विसर्जित होता है तो ब्रह्म बनता है। अतः जीवन में जो भी कर्म करें, वह अहं के सर्जन के लिए नहीं, स्वार्थपूर्ति हेतु नहीं, यश-प्रतिष्ठा हेतु नहीं वरन् लोकहितार्थ करें, ईश्वरप्रीत्यर्थ करें। यदि ऐसा करें तो न चाहने पर भी यश दास की तरह आपके पीछे-पीछे आयेगा और स्वयं को ईश्वरत्व का अनुभव होने में देर न लगेगी।

ॐ आनंद... ॐ शांति... ॐ माधुर्य...

धन्य मैत्रेयी !

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

महर्षि याज्ञवल्क्यजी की दो पत्नियाँ थीं : मैत्रेयी और कात्यायनी। मैत्रेयी ज्येष्ठ थी कात्यायनी से। कात्यायनी की प्रज्ञा सामान्य स्त्रियों जैसी ही थी किन्तु मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी थी।

एक दिन याज्ञवल्क्यजी ने अपनी दोनों पत्नियों को अपने पास बुलाया और कहा :

''मेरा विचार अब संन्यास लेने का है। अतः इस स्थान को छोड़कर मैं अन्यत्र चला जाऊँगा। इसके लिए तुम लोगों की अनुमति लेना आवश्यक है। साथ ही, मैं यह भी चाहता हूँ कि घर में जो कुछ धन-दौलत है उसे तुम दोनों में बराबर-बराबर बाँट दूँ ताकि मेरे चले जाने के बाद इसको लेकर आपसी विवाद न हो।''

यह सुनकर कात्यायनी तो चुप रही किन्तु मैत्रेयी ने पूछा :

''भगवन् ! यदि यह धन-धान्य से परिपूर्ण सारी पृथ्वी केवल मेरे ही अधिकार में आ जाय तो क्या मैं उससे किसी प्रकार अमर हो सकती हूँ।''

याज्ञवल्क्यजी ने कहा : ''नहीं। भोग-सामग्रियों से संपन्न मनुष्यों का जैसा जीवन होता है, वैसा ही तुम्हारा भी जीवन हो जायेगा। धन से कोई अमर हो जाय, उसे अमरत्व की प्राप्ति हो जाय, यह कदापि संभव नहीं है।''

तब मैत्रेयी ने कहा : ''भगवन् ! जिससे मैं अमर नहीं हो सकती उसे लेकर क्या करूँगी ? यदि धन से ही वास्तविक सुख मिलता तो आप उसे छोड़कर एकान्त अरण्य में क्यों जाते ? आप ऐसी कोई वस्तु अवश्य जानते हैं जिसके सामने इस धन एवं गृहस्थी का सारा सुख तुच्छ प्रतीत होता है। अतः मैं भी उसीको जानना चाहती हूँ। **यदेव भगवान् वेद तदेव मे ब्रूहि।** केवल जिस वस्तु को आप श्रीमान् अमरत्व का साधन जानते हैं, उसीका मुझे उपदेश करें।''

मैत्रेयी की यह जिज्ञासापूर्ण बात सुनकर याज्ञवल्क्यजी को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने मैत्रेयी की प्रशंसा करते हुए कहा :

''धन्य मैत्रेयी ! धन्य ! तुम पहले भी मुझे बहुत प्रिय थी और इस समय भी तुम्हारे मुख से यह प्रिय वचन ही निकला है। अतः आओ, मेरे समीप बैठो। मैं तुम्हें तत्त्व का उपदेश करता हूँ। तुम उसे सुनकर उस पर मनन और निदिध्यासन करो। मैं जो कुछ कहूँ, उस पर स्वयं भी विचार करके उसे हृदय में धारण करो।''

इस प्रकार कहकर महर्षि याज्ञवल्क्यजी ने उपदेश देना आरंभ किया :

''मैत्रेयी ! तुम जानती हो कि स्त्री को पति और पति को स्त्री क्यों प्रिय है ? इस रहस्य पर कभी विचार किया है ? पति इसलिए प्रिय नहीं है कि वह पति है, बल्कि इसलिए प्रिय है कि वह अपने को संतोष देता है, अपने काम आता है। इसी प्रकार पति को स्त्री भी इसलिए प्रिय नहीं होती कि वह स्त्री है, अपितु इसलिए प्रिय होती है कि उससे स्वयं को सुख मिलता है। इसी न्याय से पुत्र, धन, ब्राह्मण, क्षत्रिय, लोक, देवता, समस्त प्राणी अथवा संसार के संपूर्ण पदार्थ भी आत्मा के लिए प्रिय होने से ही प्रिय जान पड़ते हैं। अतः सबसे प्रियतम वस्तु क्या है ? अपना आत्मा।

आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो मैत्रेयि आत्मनो वा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेनेदं सर्वं विदितम्।

मैत्रेयी ! तुम्हें आत्मा का ही दर्शन, श्रवण, मनन और निदिध्यासन करना चाहिए। उसीके दर्शन, श्रवण, मनन और यथार्थ ज्ञान से सब कुछ ज्ञात हो जाता है।'' **(बृहदारण्यक उपनिषद : ४, ५, ६)**

तदनंतर महर्षि याज्ञवल्क्यजी ने भिन्न-भिन्न दृष्टांतों और युक्तियों के द्वारा ब्रह्मज्ञान का गूढ़ उपदेश देते हुए कहा :

''जहाँ अज्ञानावस्था में द्वैत होता है, वहीं अन्य अन्य को देखता है, अन्य अन्य को सुनता है, अन्य अन्य को सूँघता है, अन्य अन्य का रसास्वाद करता है, अन्य अन्य का स्पर्श करता है, अन्य अन्य का अभिवादन करता है, अन्य अन्य का मनन करता है और अन्य अन्य को विशेष रूप से जानता है। किन्तु जिसके लिए सब कुछ आत्मा ही हो गया है, वह किसके द्वारा किसे देखे ? किसके द्वारा किसे सुने ? किसके द्वारा किसे सूँघे ? किसके द्वारा किसका रसास्वादन करे ? किसके द्वारा किसका स्पर्श करे ? किसके द्वारा किसका अभिवादन करे और किसके द्वारा किसे जाने ? जिसके द्वारा पुरुष इन सबको जानता है, उसे किस साधन से जाने ?

इसलिए यहाँ **'नेति नेति'** इस प्रकार निर्देश किया गया है। आत्मा अग्राह्य है, उसका ग्रहण नहीं किया जाता। वह अक्षर है, उसका क्षय नहीं होता। वह असंग है, वह कहीं आसक्त नहीं होता। वह निर्बन्ध है, वह कभी बंधन में नहीं आता। वह आनंदस्वरूप है, वह कभी व्यथित नहीं होता। हे मैत्रेयी ! विज्ञाता को किसके द्वारा जाने ? अरे मैत्रेयी ! तुम निश्चयपूर्वक इसे समझ लो। बस, इतना ही अमरत्व है। तुम्हारी प्रार्थना के अनुसार मैंने ज्ञातव्य तत्त्व का उपदेश कर दिया।''

ऐसा उपदेश करने के पश्चात् याज्ञवल्क्यजी संन्यासी हो गये। मैत्रेयी यह अमृतमय उपदेश पाकर कृतार्थ हो गयी। यही यथार्थ संपत्ति है जिसे मैत्रेयी ने प्राप्त किया था।

धन्य है भारत की नारी ! जो बाह्य धन-संपत्ति से प्राप्त सुख को तृणवत् समझकर वास्तविक संपत्ति को अर्थात् आत्म-खजाने को पाने का पुरुषार्थ करती है। काश ! आज की नारी मैत्रेयी के चरित्र से प्रेरणा लेती...

(कल्याण के 'नारी अंक' एवं बृहदारण्यक उपनिषद पर आधारित)

*

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

मन का प्रभाव

व्यक्ति के मन की मान्यता क्या परिणाम ला सकती है ? इस विषय में वैज्ञानिकों द्वारा प्रयोग किये जा रहे हैं।

कुछ वर्ष पूर्व की एक घटित घटना है।

किसी आदमी को खून के आरोप में फाँसी की सजा सुनाई गई। कुछ वैज्ञानिक उस आदमी के पास पहुँचे और बोले :

''अमुक तारीख को तुझे अपने पाप का फल भोगने के लिए फाँसी पर चढ़ाया जायेगा।''

उसने कहा : ''हाँ, अब मेरे बचने की कोई उम्मीद नहीं है।''

तब वैज्ञानिकों ने कहा : ''जब बचने की कोई उम्मीद नहीं तो मरते-मरते एक ऐसा काम करता जा कि तेरा शरीर मानव जाति के काम आ जाए। फाँसी लगने से पहले हम तेरे शरीर पर कुछ प्रयोग करना चाहते हैं। तू चाहे तो यह हो सकता है।''

वह आदमी सहमत हो गया। वैज्ञानिकों ने इस विषय में कोर्ट से लिखित अनुमति भी प्राप्त कर ली।

जिस दिन उस आदमी को फाँसी लगनी थी उस दिन वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, डॉक्टर आदि अपनी साधन-सामग्री से सुसज्जित होकर आ गये। उन्होंने अपना प्रयोग चालू किया।

वैज्ञानिकों ने उसे समझाया : ''तुझे मरना तो है ही। फाँसी की जगह हम सर्प के दंश से तेरी

मृत्यु करायेंगे। सर्पदंश के बाद जहर शरीर में कैसे फैलता है, शरीर पर उसका कैसा असर होता है, आदमी कैसे मरता है ? हमें यह जाँच करनी है और इस जहर के निवारण के लिए क्या उपाय हो सकता है, वह हमें खोजना है। इस हेतु हम तेरे शरीर का उपयोग करेंगे।

इस तरह तेरी मृत्यु फाँसी के बदले सर्पदंश से होगी। इससे तू भी सहमत है और कोर्ट ने भी अनुमति दे दी है। ठीक है न ?''

''हाँ, ठीक है।''

निश्चित समय पर अपने आयोजन के मुताबिक वैज्ञानिकों ने उस मुजरिम के सामने एक घोड़ा लाकर खड़ा किया जिसे उस मुजरिम ने देखा। वैज्ञानिकों ने एक जहरीला साँप निकाला और साँप का दंश घोड़े को लगवाया। सर्पदंश के कुछ ही मिनटों के बाद घोड़े पर जहर का असर हुआ और घोड़ा गिर पड़ा। कुछ ही क्षणों में वह छटपटाता हुआ मर गया।

वैज्ञानिकों ने उस मुजरिम से कहा : ''अब यह प्रयोग तुम पर करना है। इसी सर्प के दंश से तुम्हारी आखिरी यात्रा होगी।''

उसकी आँखों पर पट्टी बाँध दी गयी और कंधे तक काला कपड़ा लगा दिया गया। फिर कहा गया : ''बस, अब तुम्हारा फाँसी का समय होने को है, सिर्फ दो मिनट ही बाकी हैं।''

दो मिनट के बाद उसको चूहे से कटवाया गया और वैज्ञानिकों ने कहा : ''तुझे साँप ने काटा है। अब तू मर जाएगा।''

वैज्ञानिक तो जानते थे कि चूहे ने काटा है, किन्तु उस मुजरिम को तो लगा कि साँप ने काटा है। उसकी धारणा थी, मन की मान्यता थी कि उसे साँप ने ही काटा है और इस प्रकार मरना सुनिश्चित है। अतः ज्यों ही चूहे ने काटा तो उसकी आंतरिक अवधारणा या मनःशक्ति ने उसके शरीर में छटपटाहट पैदा कर दी। जैसे घोड़ा छटपटाया था वैसे ही वह आदमी भी छटपटाया। वैज्ञानिक उसके शरीर से खून लेकर जाँच करने गये तो वे आश्चर्यचकित हो गये कि साँप के काटे बिना खून में जहर कैसे आ गया ! अपने शरीर पर सर्पदंश का प्रभाव हुआ समझकर थोड़ी ही देर में वह मुजरिम चल बसा, उसकी मौत हो गई।

जिस प्रकार, 'साँप ने काटा है और मैं मर जाऊँगा' ऐसा चिन्तन करते-करते वह मर गया, उसी प्रकार 'हार्टफेल' भी ऐसे ही होता है। इन्कमटैक्सवालों का छापा कहीं और पड़ता है लेकिन 'अब मेरा क्या होगा ? मेरा क्या होगा ?' इस प्रकार की कल्पनाएँ करके कइयों के 'हार्टफेल' हो जाते हैं। इस तरह मन का प्रभाव तन पर पड़ता है। यह है मानसिक असर।

वैज्ञानिकों को ताज्जुब हुआ कि मन का प्रभाव तन पर पड़ता है, यह तो समझ सकते हैं परन्तु साँप के काटे बिना खून में साँप का विष कैसे आया ? कहाँ से आया ? बहुत सोच-विचार के बाद उन्होंने निर्णय किया कि मन में ही ऐसी शक्ति है जो जहर भी बना लेती है।

उन लोगों को पता नहीं कि भारतीय संस्कृति में हजारों-लाखों वर्ष पहले ऋषि-मुनियों ने कहा है कि अगर आपके मन में तीव्र दृढ़ संकल्प है तो अमृत से विष बन सकता है और विष से अमृत बन सकता है। मीराबाई का उदाहरण तो सर्वविदित है।

मन का प्रभाव तन पर पड़ता है तभी अंधेरी रात में ठूँठे में चोर की कल्पना करने पर आप काँपने लगते हो, रस्सी में सर्प की कल्पना करके काँपने लगते हो। लेकिन सचमुच में यदि सर्प पड़ा हो और आप उसे रस्सी समझ लेते हो तो उसके सिर पर पैर रखकर चले भी तो जाते हो।

आपके मन की जो अवस्था होती है, उसका आपके तन पर और आपके व्यवहार पर बहुत प्रभाव पड़ता है। मन एक कल्पवृक्ष है। इसलिए कपड़ा बिगड़ जाए तो बात नहीं, धन बिगड़ जाए तो कोई बात नहीं, पुत्र-परिवार के संबंध बिगड़ जायें तो कोई बात नहीं, दूसरा चाहे कुछ भी हो जाए किन्तु मन को मत बिगड़ने देना क्योंकि उसीके द्वारा मालिक से मुलाकात हो सकती है, आत्मा का साक्षात्कार हो सकता है।

छोटी-छोटी बातों से कभी घबराना नहीं चाहिए। जो घबराकर निर्णय लेता है वह धोखा खा सकता है। जो भयभीत होकर, कुपित होकर निर्णय लेता है, उसको बहुत कुछ सहन करना पड़ता है। इसलिए भय में या क्रोध में आकर कोई निर्णय नहीं लेना चाहिए वरन् शान्त, स्वस्थ मन से निर्णय लेना चाहिए। इससे निर्णय सही होगा और कार्य भी सही होंगे। सही कार्य का परिणाम भी सही होगा। अगर कुछ गलत परिणाम आने पर भी मन को स्वस्थ बनाए रखने की आदत होगी, कला होगी तो गिरने से बच जाओगे।

उसी शान्त, स्वस्थ मन को अगर आत्मज्ञान पाने की ओर मोड़ दो तो वह आत्मलाभ करा देता है और वही मन अगर संसार के नश्वर संबंधों में, चीज-वस्तुएँ इकट्ठी करने में और सँभालने में लग जाता है, उसमें ही फँसा रहता है तो अपना ही सर्वनाश कर लेता है। इसलिए कहा गया है कि :

मनः एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः।

मन ही मनुष्य के बंधन और मोक्ष का कारण है।

अतः अपने मन को बंधन का कारण न बनने दो वरन् मुक्ति का कारण बनाओ। आपका मन मुक्त आत्मा के ज्ञान को, आनंद को, माधुर्य को सुने, मनन करे, इस प्रकार उसको मुक्तिदायक मार्ग पर चलाओ।

ॐ मुक्तोऽहं... शांतोऽहं... साक्षी अहम्...

*

महावीर का अनोखा संकल्प

दृढ़ संकल्प में अद्भुत सामर्थ्य होता है।

जैनों के २४वें तीर्थंकर भगवान महावीर ने एक बार संकल्प किया कि : 'मैं उसी द्वार की भिक्षा लूँगा, जिस द्वार पर मेरे पहुँचने के पूर्व ही सोलह शृंगार से सजी-धजी युवती हाथों में भिक्षा लिए खड़ी हो एवं उसकी आँखों में आँसू हों।'

यह एक विचित्र संकल्प था उनका। फिर भी दृढ़ निश्चयी पुरुष का संकल्प प्रकृति कैसे पूर्ण करती है, यह आगे की घटना से व्यक्त हो जाएगा।

महावीर तो चल पड़े भिक्षा लेने। मार्ग में कई लोग उन्हें भिक्षा के लिए आमंत्रित कर रहे थे, पर अपने संकल्प के मुताबिक आज वे कहीं खड़े नहीं हुए। कुछ दूर चलने के बाद उन्हें एक द्वार पर सोलह शृंगार से सजी-धजी एक युवती हाथों में भिक्षा लिए हुए खड़ी दिखाई दी।

महावीर ने कुछ क्षण रुककर देखा कि दो शर्त तो पूरी हो गयी किन्तु तीसरी शर्त पूरी होना अभी बाकी है। उस युवती की आँखों में आँसू नहीं थे। अतः वे आगे बढ़ गये।

इतने में तो वह युवती दौड़ी-दौड़ी आकर उन महापुरुष के सम्मुख खड़ी हो गयी। उसकी आँखों में आँसू भर गये थे। शर्त पूरी होते देखकर महावीर ने आश्चर्य से पूछा :

''तुम्हारे सोलह शृंगार का क्या कारण है ? भिक्षा देने का क्या कारण है और, आँखों में आँसू आने का क्या कारण है ?''

तब वह युवती बोली : ''मेरा भाई जेल में था। वह आज छूट गया है। यह समाचार सुनकर मैंने साज-शृंगार किया है। भाई के छूटने की खुशी में आज मैंने किसी साधु को भिक्षा देने का संकल्प किया था। आप भगवंत को भिक्षा देने का मौका तो मिला लेकिन आपने इसे स्वीकार नहीं किया। 'मैं कितनी अभागिन् हूँ!' ऐसा सोचकर मेरी आँखों में आँसू आ गये।''

महावीर ने देखा कि सभी शर्तें पूरी हो रही हैं। अतः वे बोले : ''लाओ भिक्षा।''

महावीर भिक्षा लेकर लौट पड़े।

इस प्रकार जो अपने संकल्प से नहीं डिगता, उसका संकल्प प्रकृति अवश्य पूरा करती है। महावीर एक-दो नहीं वरन् पूरे १२ वर्षों तक भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी-वर्षा आदि द्वन्द्वों को सहन करते रहे। उनके जीवन में हजारों विघ्न-बाधाएँ आयीं, फिर भी वे अपने संकल्प से नहीं डिगे तो अंततः कैवल्य के अधिकारी हो गये और उनका जीवन हजारों-लाखों लोगों के लिए प्रेरणास्रोत बन गया।

*

दयालु बालक शतमन्यु

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

यह घटना सतयुग की है।

एक बार हमारे देश में अकाल पड़ा। वर्षा के अभाव के कारण अन्न पैदा नहीं हुआ। पशुओं के लिए चारा नहीं रहा। दूसरे वर्ष भी वर्षा नहीं हुई। दिनोंदिन देश की हालत खराब होती चली गई। सूर्य की प्रखर किरणों के प्रभाव से पृथ्वी का जल-स्तर बहुत नीचे चला गया। फलतः धरती के ऊपरी सतह की नमी गायब हो गयी। नदी-तालाब सब सूख गये। वृक्ष भी सूखने लगे। मनुष्यों और पशुओं में हाहाकार मच गया।

अकाल की अवधि बढ़ती गयी। एक वर्ष नहीं, दो वर्ष नहीं, पूरे बारह वर्षों तक बारिश की एक बूँद भी धरती पर नहीं गिरी। लोग त्राहि माम्-त्राहि माम् पुकारने लगे। कहीं अन्न नहीं, कहीं जल नहीं। वर्षा और शीत ऋतुएँ नहीं। सर्वत्र सदा एक ही ग्रीष्म ऋतु प्रवर्त्तमान रही। धरती से उड़ती हुई धूल और तपती तेज लू में पशु-पक्षी ही नहीं, न जाने कितने ही मनुष्य काल-कवलित हो गये, कोई गिनती नहीं। भूखामरी के कारण माताओं के स्तनों में दूध सूख गया। अतः दूध न मिलने के कारण कितने ही नवजात शिशु मृत्यु की गोद में सदा के लिए सो गये। इस प्रकार पूरे देश में नर-कंकालों एवं अन्य जीव-जन्तुओं की हड्डियों का ढेर लग गया। एक मुट्ठी अन्न कोई किसीको कहाँ से देता ? परिस्थिति दिनोंदिन बिगड़ती ही चली गयी। अन्न-जल के लाले पड़ गये।

इस दौरान् किसीने कहा कि नरमेध यज्ञ किया जाय तो वर्षा हो सकती है। यह बात अधिकांश लोगों को जँच गयी।

अतः एक निश्चित तिथि और निश्चित स्थान पर एक विशाल जनसमूह एकत्र हुआ। पर सभी मौन थे। सभी के सिर झुके हुए थे। प्राण सबको प्यारे होते हैं। जबरदस्ती किसीकी भी बलि नहीं दी जा सकती थी क्योंकि यज्ञों का नियम ही ऐसा था।

इतने में अचानक सभा का मौन टूटा। सबने दृष्टि उठायी तो देखा कि एक बारह वर्ष का अत्यन्त सुन्दर बालक सभा के बीच में खड़ा है। उसके अंग-प्रत्यंग कोमल दिखाई दे रहे थे। उसने कहा :

''उपस्थित महानुभावों ! असंख्य प्राणियों की रक्षा एवं देश को संकट की स्थिति से उबारने के लिये मैं अपनी बलि देने को सहर्ष प्रस्तुत हूँ। ये प्राण देश के हैं और देश के काम आ जायें, इससे अधिक सदुपयोग इनका और क्या हो सकता है ? इसी बहाने विश्वात्मरूप प्रभु की सेवा इस नश्वर काया के बलिदान से हो जायेगी।''

''बेटा शतमन्यु ! तू धन्य है ! तूने अपने पूर्वजों को अमर कर दिया।'' ऐसा उद्घोष करते हुए एक व्यक्ति ने दौड़कर उसे अपने हृदय से लगा लिया।

वह व्यक्ति कोई और नहीं वरन् स्वयं उसके पिता थे। शतमन्यु की माता भी वहीं कहीं पर उपस्थित थीं। वे भी शतमन्यु के पास आ गईं। उनकी आँखों से झर-झर करके अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। माँ ने शतमन्यु को अपनी छाती से इस प्रकार लगा लिया जैसे उसे कभी नहीं छोड़ेंगी।

नियत समय पर यज्ञ-समारोह यथाविधि शुरू हुआ। शतमन्यु को अनेक तीर्थों के पवित्र जल से स्नान कराकर नये वस्त्राभूषण पहनाये गये। शरीर पर सुगन्धित चंदन का लेप लगाया गया। उसे पुष्पमालाओं से अलंकृत किया गया।

इसके बाद बालक शतमन्यु यज्ञ-मण्डप में आया। यज्ञ-स्तम्भ के समीप खड़ा होकर वह देवराज इन्द्र का स्मरण करने लगा। यज्ञ-मण्डप

एकदम शांत था। बालक शतमन्यु सिर झुकाये हुए अपने-आपका बलिदान देने को तैयार खड़ा था। एकत्रित जनसमूह मौन होकर उधर एकटक देख रहा था। उस क्षण शून्य में विचित्र बाजे बज उठे। शतमन्यु पर पारिजात पुष्पों की वृष्टि होने लगी। अचानक मेघगर्जना के साथ वज्रधारी इन्द्र प्रकट हो गये। सब लोग आँखें फाड़-फाड़कर आश्चर्य के साथ इस दृश्य को देख रहे थे।

शतमन्यु के मस्तक पर अत्यन्त स्नेह से हाथ फेरते हुए सुरपति बोले : ''वत्स ! तेरी देशभक्ति और जनकल्याण की भावना से मैं संतुष्ट हूँ। जिस देश के बालक अपने देश की रक्षा के लिये अपने प्राणों को न्यौछावर करने के लिए हमेशा उद्यत रहते हैं, उस देश का कभी पतन नहीं हो सकता। तेरे त्यागभाव से संतुष्ट होने के कारण तेरी बलि के बिना ही मैं यज्ञ-फल प्रदान कर दूँगा।'' इतना कहकर इन्द्र अन्तर्धान हो गये।

दूसरे ही दिन इतनी घनघोर वर्षा हुई कि धरती पर सर्वत्र जल-ही-जल दिखने लगा। परिणामस्वरूप पूरे देश में अन्न-जल, फल-फूल का प्राचूर्य हो गया। देश के लिये प्राण अर्पित करनेवाले शतमन्यु के त्याग, तप एवं जनकल्याण की भावना ने सर्वत्र खुशियाँ-ही-खुशियाँ बिखेर दीं। सबके हृदय में आनंद के हिलोरे उठने लगे।

धन्य है भारतभूमि ! धन्य हैं भारत के शतमन्यु जैसे लाल ! जो देश की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने को भी तैयार रहते हैं।

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

स्मरणशक्ति कैसे बढ़ायें ?

अच्छी और तीव्र स्मरणशक्ति के लिए हमें मानसिक और शारीरिक रूप से स्वस्थ, सबल और नीरोग रहना होगा। जैसे आप हँसना और गाल फुलाना दोनों एक साथ नहीं कर सकते, वैसे ही आप मानसिक और शारीरिक रूप से स्वस्थ और सशक्त हुए बिना अपनी स्मृति को भी अच्छी और तीव्र बनाए नहीं रख सकते।

आप यह एक बात ठीक से याद रखें कि हमारी यादशक्ति हमारे ध्यान पर और मन की एकाग्रता पर निर्भर करती है। हम जिस तरफ जितनी ज्यादा एकाग्रतापूर्वक ध्यान देंगे, उस तरफ हमारी विचारशक्ति उतनी ज्यादा केन्द्रित हो जाएगी। इस कार्य में जितनी अधिक तीव्रता, स्थिरता और शक्ति लगाई जाएगी, उतनी गहराई और मजबूती से वह वस्तु हमारे स्मृति-पटल पर अंकित हो जाएगी।

स्मृति को बनाये रखना ही स्मरणशक्ति है और इसके लिए जरूरी है सुने हुए व पढ़े हुए विषयों की बार-बार आवृत्ति करना, अभ्यास करना। जो बातें लम्बे समय तक हमारे ध्यान में नहीं आतीं, उन्हें हम भूल जाते हैं और जो बातें हमारे ध्यान में बराबर आती रहती हैं, उनकी याद बनी रहती है। विद्यार्थियों को चाहिए कि वे अपने अभ्यासक्रम (कोर्स) की किताबों को पूरे मनोयोग से एकाग्रचित्त होकर पढ़ा करें और बारंबार नियमित रूप से दोहराते भी रहें। फालतू सोच-विचार करने से, चिंता करने से,

ज्यादा बोलने से, फालतू बातें करने से, झूठ बोलने से या बहानेबाजी करने से तथा व्यर्थ के कामों में उलझे रहने से स्मरणशक्ति नष्ट होती है।

अच्छी स्मरणशक्ति के लिए मानसिक स्वास्थ्य के साथ शरीर का भी स्वस्थ और बलवान होना जरूरी होता है।

एक घरेलू प्रयोग : शंखावली (शंखपुष्पी) का पंचांग कूट-पीसकर, छानकर, महीन चूर्ण करके शीशी में भर लें। रात में सोते समय बादाम की २ गिरी और ५-५ ग्राम चारों मगज (तरबूज, खरबूज, पतली ककड़ी और मोटी खीरा ककड़ी) के बीज, २ पिस्ता, १ छुहारा, ४ इलायची (छोटी), ५ ग्राम सौंफ, १ चम्मच मक्खन और एक गिलास दूध लें।

विधि : रात में बादाम, पिस्ता, छुहारा और चारों मगज १ कप पानी में डालकर रख दें। प्रातःकाल बादाम का छिलका हटाकर दो-चार बूँद पानी के साथ पत्थर पर घिस लें और उस लेप को कटोरी में ले लें। फिर पिस्ता, इलायची के दाने व छुहारे को बारीक काट-पीसकर उसमें मिला लें। चारों मगज भी उसमें ऐसे ही डाल लें। अब इन सबको अच्छी तरह मिलाकर खूब चबा-चबाकर खा जायें। उसके बाद ३ ग्राम शंखावली का महीन चूर्ण मक्खन में मिलाकर चाट लें और ऊपर से एक गिलास कुनकुना मीठा दूध १-१ घूँट करके पी लें। अंत में, थोड़ा सौंफ मुँह में डालकर धीरे-धीरे १५-२० मिनट तक चबाते रहें और उसका रस चूसते रहें। चूसने के बाद उसे निगल जाएँ।

लाभ : यह प्रयोग दिमागी ताकत, तरावट और स्मरणशक्ति बढ़ाने के लिए बेजोड़ है। साथ-ही-साथ यह शरीर में शक्ति व स्फूर्ति पैदा करता है। लगातार ४० दिन तक प्रतिदिन सुबह नित्य कर्मों से निवृत्त होकर खाली पेट इसका सेवन करके चमत्कारिक लाभ देख सकते हैं। दो घण्टे बाद भोजन करें। उपरोक्त सभी द्रव्य पंसारी या कच्ची दवा बेचनेवाली दुकान से इकट्ठे ले आएँ और १५-२० मिनट का समय देकर प्रतिदिन तैयार करें। इस प्रयोग को आप ४० दिन से भी ज्यादा, जब तक चाहें सेवन कर सकते हैं।

* बौद्धिक बल बढ़ाएँ *

बुद्धि कहीं बाजार में बिकने या मिलनेवाली चीज नहीं है, बल्कि अभ्यास से प्राप्त करने की और बढ़ाई जानेवाली चीज है। इसलिए आपको भरपूर अभ्यास करके बुद्धि और ज्ञान बढ़ाने में जुटे रहना होगा।

विद्या, बुद्धि और ज्ञान को जितना खर्च किया जाए उतना ही ये बढ़ते जाते हैं जबकि धन या अन्य पदार्थ खर्च करने पर घटते हैं। इसका मतलब यही है कि हम विद्या की प्राप्ति और बुद्धि के विकास के लिए जितना प्रयत्न करेंगे, अभ्यास करेंगे, उतना ही हमारा ज्ञान और बौद्धिक बल बढ़ता जाएगा।

सतत अभ्यास और परिश्रम करने के लिए यह भी जरूरी है कि आपका दिमाग और शरीर स्वस्थ और ताकतवर भी रहे। यदि अल्प श्रम में ही थक जाएँगे तो पढ़ाई-लिखाई में ज्यादा समय तक मन नहीं लगेगा।

* दिमागी ताकत के लिए कुछ उपाय *

(अ) एक गाजर और पात गोभी के लगभग ५०-६० ग्राम अर्थात् १०-१२ पत्ते काटकर प्लेट में रख लें। इस पर हरा धनियाँ काटकर डाल दें। फिर उसमें सेंधा नमक, कालीमिर्च का पाउडर और नींबू का रस मिलाकर खूब चबा-चबाकर नाश्ते के रूप में खाया करें।

भोजन के साथ एक गिलास छाछ भी पिया करें।

(ब) रात को ९ बजे के बाद पढ़ाई के लिए जागरण करें तो आधे-आधे घण्टे के अंतर पर आधा गिलास ठण्डा पानी पीते रहें। इससे जागरण के कारण होनेवाला वात-प्रकोप नहीं होगा। वैसे ११ बजे से पहले सो जाना ही ठीक होता है।

(३) लेटकर या झुके हुए बैठकर न पढ़ा करें। रीढ़ की हड्डी सीधी रखकर बैठें। इससे आलस्य या निद्रा का असर नहीं होगा और स्फूर्ति बनी रहेगी। सुस्ती महसूस हो तो थोड़ी चहलकदमी कर लिया करें। नींद भगाने के लिए चाय या सिगरेट का सेवन न करें।

टी.वी. पर ज्यादा कार्यक्रम न देखा करें क्योंकि

एक तो इससे समय नष्ट होता है और दूसरे, आँखें खराब होती हैं। टी.वी. पर कोई बहुत ही ज्ञानवर्धक कार्यक्रम हो तभी देखा करें। फालतू कार्यक्रम देखकर अपने समय, अपनी पढ़ाई-लिखाई और अपनी आँखों का सत्यानाश न करें।

यदि विद्यार्थीगण इन नियमों पर सच्चाई से अमल करेंगे तो उनकी दिमागी शक्ति खूब बढ़ेगी। इससे वे खूब अच्छी पढ़ाई कर सकेंगे। परिणामस्वरूप आगामी परीक्षाओं में खूब अच्छे नम्बरों से उत्तीर्ण हो सकेंगे। इसी तरह भावी जीवन की परीक्षाओं में भी सफल होते रहेंगे।

*

'लोक कल्याण सेतु' वार्षिक सदस्यता योजना प्रारम्भ

पाठकों की माँग को ध्यान में रखते हुए आश्रम द्वारा प्रकाशित आध्यात्मिक मासिक समाचार पत्र 'लोक कल्याण सेतु' की वार्षिक सदस्यता शुरू कर दी गयी है। अब आप इसके वार्षिक सदस्य बनकर पूज्यश्री के पावन संदेश तथा आध्यात्मिक व जीवन-विकास के समाचारों और सूत्रों को घर बैठे ही प्राप्त कर सकते हैं।

इस हेतु अपने निकट के आश्रम/समिति/सेवाधारी सेतु से सम्पर्क करें।

दो विशेषांकों सहित वार्षिक सदस्यता शुल्क रू. २०/-. प्रत्येक सदस्यता पर आश्रम द्वारा प्रकाशित मधुर व्यवहार अथवा पूज्यश्री के पावन संदेशों से सुसज्जित स्टीकर भेंट में दिए जायेंगे।

(१) सेवाधारी सेतु इसके वार्षिक सदस्य बनाकर भारतीय संस्कृति की मधुर सुवास को घर-घर तथा जन-जन तक पहुँचाने के साथ-साथ आर्थिक सहयोग भी प्राप्त कर सकते हैं।

(२) केवल 'लोक कल्याण सेतु' में ही जनोपयोगी व्यापारिक विज्ञापन स्वीकार किये जाते हैं।

अधिक जानकारी हेतु 'लोक कल्याण सेतु' कार्यालय, अमदावाद का सम्पर्क करें।
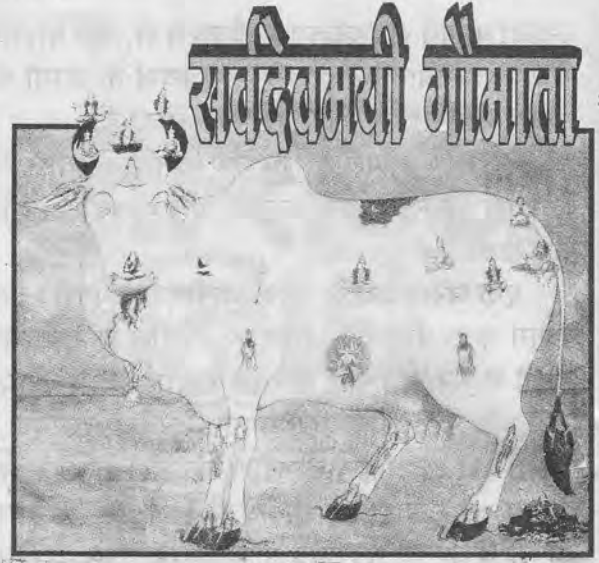
गौमाता : रोग-दोषनिवारिणी

[गतांक का शेष]

(११) प्रसवपीड़ा : प्रसवपीड़ा के समय ५० मि.ली. गोमूत्र को गायत्री मंत्र से अभिमंत्रित करके पिलाने से प्रसवपीड़ा कम होती है तथा प्रसव आसान हो जाता है।

(१२) आँख का धुँधलापन, रतौंधी तथा नजर की कमजोरी : आँख के रोगों में गोमूत्र रामबाण तथा आजमाई हुई दवा है। इसके लिए काली बछिया का मूत्र एकत्र करके ताँबे के बर्तन में गर्म करें। चौथाई भाग बचने पर उसे निथारकर पानी अलग कर लें। नीचे जो लवण बचते हैं उन्हें फेंक दें। ऊपर का पानी किसी स्वच्छ काँच की शीशी में भर लें। यह पानी नियमितरूप से सुबह-शाम आँख में डालें। बहुत मामूली-सी या लाकुला की तरह हल्की-सी जलन होती है। आँख की खुजली, धुँधलापन, रतौंधी तथा कमजोर नजरवालों के लिए यह बहुत अच्छी औषधि है। एक-दो माह में ही या तो चश्मा हट जाएगा या उसका नम्बर कम हो जाएगा।

(१३) दाँतों में दर्द या पायरिया : दाँत एवं दाढ़ के दर्द में गोमूत्र बहुत अच्छा कार्य करता है।

जब दाँत में दर्द असह्य हो जाए तब गोमूत्र से प्रतिदिन कुल्ला करने पर पायरिया रोग समाप्त हो जाता है।

(१४) अन्य उपयोग : गोमूत्र का प्रयोग पंचामृत, पंचगव्य तथा षड्भिषंग में किया जाता है। इन सभी का औषधीय महत्त्व है।

प्रसव के बाद घरों के शुद्धिकरण हेतु गोमूत्र का छिड़काव किया जाता है।

श्मशान से आने के बाद भी व्यक्तियों का शुद्धिकरण गंगाजल या गोमूत्र छिड़ककर तथा पिलाकर किया जाता है। हो सकता है कि इसके जीवाणुनाशक गुणों के कारण ऐसा करने की परम्परा चलती आ रही हो।

(५) गोमय :

गाय के गोबर को परम पवित्र माना गया है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अनुसार :

गोमयेनोपलिप्तं तु शुचि स्थान प्रकीतिर्तम् ।
अग्नियागार सुरागारान् गोमयेनोपलेपयेत् ।
गोमये तु सदा लक्ष्मीः स्वमेव न्यवस्थिता ।

गाय के गोबर से लीपा स्थान सब प्रकार से पवित्र होता है। इसलिए यज्ञशाला और भोजन बनाने के स्थान को गोमय से लीपना चाहिए। गोबर में तो साक्षात् लक्ष्मी अपने स्वरूप में विराजमान रहती हैं। पवित्रता के साथ-साथ गाय के गोबर में अनेक औषधीय गुण भी होते हैं। यद्यपि इनका कोई वैज्ञानिक प्रमाण नहीं है। परंतु साधारण रोगों में इसका प्रयोग करके देखा जा सकता है।

(१) चर्म रोग, (दाद, खाज, खुजली) : ये चर्मरोग गंदगी, खुश्की तथा रक्तविकार से उत्पन्न होते हैं तथा अधिकतर मनुष्यों में पाये जाते हैं। इनको खुजलाने से ये और अधिक फैलते हैं तथा रोगी के कपड़ों से तथा संपर्क से दूसरे प्राणियों में फैलते हैं। इनकी चिकित्सा हेतु रोगग्रस्त भाग पर गाय़ के ताजे गोबर का लेप करना लाभदायक रहता है। लेप दिन में कई बार करना चाहिए। लेप के बाद रोगग्रस्त भाग को हमेशा स्वच्छ पानी से ही साफ करें। उस पर साबुन आदि का प्रयोग न करें। सूखी खुजली में गोबर का रस रामबाण है। **(क्रमशः)**

भारतीय संस्कृति की गरीमा के समर्थकों की दूरदृष्टि

आज के विद्यार्थी ही देश के भावी नागरिक हैं और आगे चलकर उन्हीं के कन्धों पर देश की स्वतंत्रता की रक्षा और उसकी परिपुष्टि का भार पड़ने वाला है।

किन्तु हमारा दुर्भाग्य है कि वर्त्तमान दौर में वे पाश्चात्य संस्कृति के अन्धानुकरण में इतना रत हैं कि न्याय, विवेक और लोककल्याण जैसी उदात्त भावनाओं से विलग होते जा रहे हैं।

हमारी वर्त्तमान स्कूली शिक्षा एवं खेलकूद से उनका शारीरिक-मानसिक विकास तो होता है किन्तु नैतिक एवं आत्मिक विकास नहीं हो पाता और इसके बिना विद्यार्थी जीवन अधूरा रह जाता है।

इसी अभाव की पूर्ति के लिए परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू विद्यार्थियों के लिए देश के कोने-कोने में आयोजित होनेवाले तेजस्वी विद्यार्थी तालीम शिविरों में दुर्लभ एवं विस्मृत यौगिक क्रियाओं एवं अपने शुभ संकल्पों तथा प्रेरणादायी अनुभवसंपन्न वचनों द्वारा उनमें आध्यात्मिक चेतना का संचारकर भारतीय संस्कृति से अनुप्राणित सुसंस्कारों का वपन व सिंचन करते हैं।

इसी तरह का एक दिव्य शिविर विद्यार्थियों के लिए नजफगढ़ (दिल्ली)में आयोजित होने जा रहा है।

ऐसे शिविर पूरे देश में समय-समय पर होते रहें तो हमारा देश पुनः विश्व का आध्यात्मिक शिरमौर बन सकता है। यही नहीं आपश्री के पावन-प्रेरक मार्गदर्शन में सेवा कर रही देश भर की ७१५ से भी अधिक श्री योग वेदांत सेवा समितियाँ अपने-अपने क्षेत्रों में व्यापक स्तर पर बाल संस्कार केन्द्रों का श्रीगणेश करने जा रही हैं। हमें इस बात की बड़ी प्रसन्नता है।

ईश्वर करें इस महान दैवी कार्य में हम सब सफल हों।

– माननीय डॉ. मुरली मनोहर जोशी
केन्द्रीय मानव संसाधन एवं विकास मंत्री, भारत सरकार।

*

भारत की भावी पीढ़ी का हितचिंतन करनेवाले, समग्र राष्ट्र के हितैषी ऐसे नेतागणों को संपादक की ओर से खूब-खूब धन्यवाद।

*

विद्यार्थी ही राष्ट्र की आधारभित्ति हैं। अतः उनके निर्माण और रक्षण में हमें अधिक-से-अधिक दत्तावधान रहना चाहिए। उन्हें ऐसी शिक्षा की जरूरत है जिससे विद्या-बुद्धि के विकास के साथ-साथ उनका चारित्रिक व नैतिक उत्थान भी संभव हो। इसके अतिरिक्त उनमें राष्ट्रभक्ति का भाव भी कूट-कूटकर भर जाय। वर्त्तमान शिक्षा प्रणाली ऐसी योग्यताएँ विकसित करने में अक्षम है। इसी अभाव को महसूस करते हुए परम पूज्यपाद संतश्री आसारामजी बापू विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविरों में विद्यार्थियों के तन-मन को स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त रखने, मेधाशक्ति बढ़ाने तथा आत्मोन्नति के मार्ग पर अग्रसर करने के लिए उन्हें भारतीय संस्कृति के दिव्य कणों से अवगत कराकर कुछ यौगिक क्रियाओं के साथ-साथ सारस्वत्य मंत्र भी प्रदान करते हैं। आपके पवित्र मार्गदर्शन में भारत भर में फैली हुई ७१५ से अधिक श्री योग वेदांत सेवा समितियाँ भी बालकों के आत्मोत्थान हेतु बाल संस्कार केन्द्रों का शुभारम्भ करने जा रही हैं, जो कि बहुत ही सराहनीय कार्य है।

संतश्री आसारामजी न्यास जन-जन में मैत्री, सद्भाव, शान्ति एवं समन्वय फैलाने का पवित्र कार्य कर रहा है। आश्रम के भेद-भावरहित व परहितपरायण व्यवहार से विभिन्न जाति, धर्म एवं संप्रदायों के मानने वाले लोग लाभान्वित हो रहें हैं। चाहे छोटा हो अथवा बड़ा, गरीब हो अथवा अमीर, अधिकारी हो अथवा मंत्री, छोटा व्यवसायी हो अथवा बड़ा उद्योगपति सभी पूज्य बापू से बहुत स्नेह करते हैं। यही तो भारतीय संस्कृति की विशेषता है। यहाँ ज्ञान का आदर किया जाता है।

आश्रम की कई अन्य प्रवृत्तियाँ भी हैं। इस न्यास के द्वारा नारी उत्थान समितियाँ और आदिवासी उत्थान समितियाँ भी चलाई जा रही हैं। अभी दिवाली से पूर्व आदिवासी इलाकों में अन्न, वस्त्र व मिठाई के साथ पूज्य बापू ने अपना मीठा स्नेह भरा संदेश आदिवासियों को दिया। प्राकृतिक प्रकोपों के वक्त प्रभावित क्षेत्रों में जाकर उनकी प्रेरणा से हजारों शिष्य व्यापक सहायता कार्यक्रम आयोजित करते हैं।

आश्रम के सत्साहित्य का प्रकाशन ६ भाषाओं में तथा 'ऋषि प्रसाद' मासिक पत्रिका का प्रकाशन तीन भाषाओं में होता है। इस आध्यात्मिक पत्रिका के पाठक लाखों की संख्या में है, जो इसकी लोकप्रियता को दर्शाते है। ऑडियो-विडियो कैसेटों एवं सी.डी. से भी पूज्य बापू के सत्संग-प्रवचनों का लाभ जनता को मिलता रहता है।

इस प्रकार संतश्री आसारामजी न्यास मानवमात्र का सर्वांगीण उत्थान करने के दैवी कार्य में सतत संलग्न है। इस न्यास की सर्वमंगलकारी प्रवृत्तियाँ दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती रहें, ऐसी मेरी शुभ कामना है।

माननीया सुश्री उमा भारती
मानव संसाधन राज्यमंत्री, भारत सरकार

*

इनकी दूरदर्शिता और पैनी दृष्टि पर आश्रम की ओर से आश्रम के ट्रस्टी स्वामी शिवानंद आभारी हैं

एकान्त यानी एक में, एक परब्रह्म परमात्मा में सारी वृत्तियों का अन्त। कुछ नादान लोग एकान्त का मतलब ऐसा स्थान समझते हैं जहाँ कोई बोलने-टोकनेवाला न हो। यह मन की चालाकी है। कई श्रेष्ठ समझे जानेवाले साधक मन के इस चक्कर में पड़कर अपना पतन स्वयं आमंत्रित करते हैं। फलस्वरूप वे ऐसी खाई में गिरते हैं जहाँ से निकलना फिर उनके वश की बात नहीं होती। अतः साधक को सदैव सावधान रहना चाहिए।

मंत्रदीक्षा से जीवन ही बदल गया

ॐ गुरुदेवाय नमः ।

हाँ... यही वह परम पावन पुण्यदायी मंत्र है जिसकी वजह से आज मैं H. S. C. Board की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ हूँ।

मैं एक साधक हूँ। मैंने १९९७ में चेटीचंड के शिविर में पूज्य गुरुदेव से मंत्रदीक्षा ली थी। सचमुच, मंत्रदीक्षा के बाद तो मेरा सारा जीवन ही बदल गया। जिन सफलताओं की प्राप्ति के लिए मैं दिन-रात मेहनत करता, फिर भी वे सफलताएँ पाना मेरे लिए अत्यंत कठिन था, वे ही सफलताएँ आज मेरे समक्ष अपने आप आ खड़ी होती हैं।

मैं G. I. D. C. की एक कंपनी में नौकरी करता हूँ। नौकरी के साथ-साथ बारहवीं कक्षा (H. S. C. Board) की परीक्षा के लिए आवेदनपत्र भर दिया था। हर बार तो परीक्षा के दौरान मुझे अत्यंत मानसिक तनाव रहता था परंतु इस बार मैं बिल्कुल तनावरहित था।

अरे, १९ मार्च, १९९८ के दिन गुजराती भाषा के प्रथम प्रश्नपत्र की परीक्षा होनी थी और उधर मैं दिनांक : १३ से १५ मार्च, १९९८ तक अमदावाद आश्रम में होली के 'ध्यान योग साधना शिविर' में शरीक रहा। तदनंतर केवल चार दिन ही पढ़कर मैंने परीक्षा दी। फिर भी (H. S. C. Board) की इस परीक्षा में मुझे ६५ प्रतिशत अंक मिले।

मेरी इस सफलता के पीछे एक ही कारण है कि उत्तरपुस्तिका में सबसे पहले **'ॐ गुरुदेवाय नमः'** यह मंत्र लिखता था और आखिर में लिखता था : **'जय गुरुदेव।'**

सचमुच, पूज्य गुरुदेव की महिमा असीम है।

मेरे हाथ में जब परीक्षा का परिणाम आया, तब उसे देखकर मेरी आँखों से हर्ष के आँसू बह चले। मेरा हृदय अपने प्यारे गुरुदेव के प्रति अहोभाव से भर गया।

गुरु सेवत ते नर धन्य यहाँ ।
तिनको नहीं दुःख यहाँ न वहाँ ॥

जय गुरुदेव...

- सतीश आनंद दळवी
सेक्टर १७, ब्लॉक नं. ७१/२ 'छ' टाईप, गाँधीनगर-१७.

*

प्राणायाम से चमत्कारिक लाभ

मुझे १०-२० मिनट में पेशाब आने की तकलीफ थी। मैंने हिन्दूजा अस्पताल में इलाज करवाया तो डॉक्टर ने कहा : ''आपके शरीर की कोई नस-नाड़ी कमजोर नहीं है। आप दवाइयाँ लेना बंद कर दें।''

फिर मैं अमदावाद आश्रम में आया। उस वक्त यहाँ पूज्य बापू नहीं थे। तब मैंने बड़ बादशाह की परिक्रमा की एवं 'योगासन' पुस्तक में वर्णित प्राणायाम करना आरंभ किया। इस प्राणायाम के प्रयोग से मुझे बहुत लाभ हुआ। अब १-२ घण्टे पर पेशाब आता है। यह पूज्य बापू की कृपा का ही चमत्कार है!

मेरे गुरुदेव ने समाधि ले ली है। अतः विश्वशांति सत्संग समारोह, बांद्रा (मुंबई) में मैंने पूज्य बापू से मंत्रदीक्षा लेने के लिए नाम लिखवाया था। किन्तु 'श्रीगुरुगीता' में लिखा हुआ है कि गुरु एक बार ही किया जाता है। तो जिसके गुरु समाधिस्थ हो चुके हों, क्या वह दूसरे गुरु से मंत्रदीक्षा ले सकता है? यदि हाँ, तो मैं पूज्य बापू से मंत्रदीक्षा लेना चाहता हूँ।

- माँगीलाल बी. मिस्त्री
20/A/2, *शीश महल, वेंकटेश्वर नगर,*
केबीन रोड, भायन्दर (पूर्व), मुंबई।

मान्यवर,

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि वर्त्तमान भारत की अग्रगण्य आध्यात्मिक विभूति प्रातःस्मरणीय परम पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के प्रेरक मार्गदर्शन में प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' विश्व के कोने-कोने में विस्मृत भारतीय वैदिक ज्ञान एवं संस्कृति को पुनर्प्रतिष्ठित करने में पूरी निष्ठा एवं तत्परता से संलग्न है।

'ऋषि प्रसाद' विशेष रूप से विद्यार्थियों की मेधा-शक्ति का विकास करने, शरीर को सुदृढ़ बनाने तथा उनमें उत्साह, शक्ति-सामर्थ्य व कर्त्तव्यनिष्ठा जैसे दिव्य गुणों को उभारने में सहायक विषय-विचारों से सुसज्जित है।

इन्हीं दैवी विशेषताओं से प्रभावित होकर हमारे विद्यालय के सभी भाग्यशाली २५०० विद्यार्थियों ने 'ऋषि प्रसाद' की सदस्यता ग्रहण कर ली है।

अतः भारतभर के सभी विद्यालयों के प्रधानाचार्यगणों एवं आचार्यगणों से हमारा यही अनुरोध है कि आप भारतीय संस्कृति की महान् परंपराओं के अनुकरण करने का दिव्य संदेश देनेवाली इस पत्रिका का अधिक-से-अधिक विद्यार्थियों को सदस्य बनने हेतु प्रेरित कर अपना अविस्मरणीय सहयोग प्रदान करने की कृपा करें।

आपको अपने इस सर्वमंगलकारी प्रयास में हमारे स्कूल का ज्वलंत उदाहरण एक जीवंत संबल के रूप में सहयोग प्रदान करेगा। मुझे तो यह कहते हुए विशेष गौरव का अनुभव हो रहा है कि जब हमारे अंग्रेजी माध्यम में पढ़ाई करनेवाले विद्यार्थीगण भाषा-अवांतर की कठिनाई के बावजूद भारतीय संस्कृति की मार्गदर्शक और पुनरुद्धारक 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका में इतनी रुचि दिखा रहे हैं तो अपनी ही राष्ट्रभाषा हिन्दी माध्यम में पढ़नेवाले छात्र इसमें विशेष रुचि दिखायें तो आश्चर्य की क्या बात है ?

मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि हमारी युवा-शक्ति उपरोक्त संदेश को अपने आचरण में उतारकर भारत को पुनः अपना स्वर्णिम गौरव वापस दिलाने में सफल होगी।

अंत में, मैं उन सभी को हार्दिक बधाइयाँ देता हूँ, जो मानवकल्याण के इस दैवी कार्य में संलग्न हैं।

- प्रधानाचार्य
डॉन बोस्को स्प्लेंडिड
इंग्लिश मीडियम स्कूल, कलकत्ता।

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ७२ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया अक्तूबर तक अपना नया पता भिजवा दें।

गुरुभक्तियोग का अभ्यास आपको भय, अज्ञान, निराशावादी स्वभाव, मानसिक अशांति, रोग, निराशा, चिन्ता आदि से मुक्त होने में सहायभूत होता है। *- स्वामी शिवानन्दजी*

सूरत आश्रम में लाखों लोगों को कृष्ण-प्रेम में सराबोर करने के पश्चात् पूज्यश्री एकांतवास के लिए अमदावाद आश्रम में पधारे। किन्तु यहाँ भी एकांत कहाँ ? अपने भाविक भक्तों के अंतर की पुकार सुनकर, कभी दिन में एक, कभी दो तो कभी तीन-तीन बार तक अपनी कुटिया के बाहर निकलकर पूज्यश्री उन्हें ज्ञानामृत का पान कराते रहे।

यहाँ से पूज्यश्री दिनांक : २४-८-९८ को उदयपुर के डबोक आश्रम के लिए रवाना हुए।

उदयपुर : दिनांक : २४ अगस्त की रात को कुंडलिनी योग के आचार्य पूज्य बापूजी उदयपुर स्थित डबोक आश्रम पहुँचे। उदयपुरवासी तो अपने लोकलाड़ीले सद्गुरुदेव को अपने बीच पाकर फूले न समाये। उसी दिन रात को हजारों लोगों ने सत्संग का लाभ लिया।

यहाँ दिनांक : २५ एवं २६ अगस्त '९८ को हजारों की संख्या में श्रद्धालुजनों ने आत्मानंद को छूकर आती हुई पूज्यश्री की अमृतवाणी से स्वयं में एक नवीन आध्यात्मिक संचार का अनुभव किया।

दिनांक : २६ अगस्त को गणेश चतुर्थी भी बड़े धूमधाम से मनायी गयी। सत्संग के अंतिम क्षणों में सभी को प्रसाद-वितरण किया गया। तत्पश्चात् कांकरोली की सत्संग के लिए पूज्य बापूजी उदयपुर से २६ तारीख की मध्याह्न को रवाना हुए।

कांकरोली : दिनांक : २६ अगस्त को ही पूज्यश्री ने भगवान द्वारिकाधीश की इस पुण्यसलिला अवनि व नगरी में पदार्पण किया।

भारत देश ही नहीं वरन् दुनियाँ के अनेकानेक देशों की जनता को अपनी गूढ़ एवं मार्मिक हरिकथा के माध्यम से भारतीय संस्कृति का सच्चा पाठ पढ़ानेवाले ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापू के २८ से ३० अगस्त तक होनेवाले दिव्य सत्संग समारोह की तैयारियाँ यहाँ काफी दिनों पहले से ही चल रही थी, जो आसपास के क्षेत्रों में हुए प्रचार-प्रसार से स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही थी।

इन तीनों दिनों के सत्संग के दौरान लाखों श्रद्धालुजनों को पूज्यश्री ने अपनी पीयूषवाणी का रसपान कराया।

संतशिरोमणि पूज्य बापू ने सत्संग-प्रवचन के दूसरे दिन विभिन्न स्कूलों के हजारों छात्र-छात्राओं को स्मरणशक्ति व आत्मशक्ति बढ़ाने तथा शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास कर जीवन को सफल बनाने हेतु अनेक दुर्लभ व्यावहारिक प्रयोग व नुस्खे बताए।

आमेट : कांकरोली से पुष्कर जाते वक्त पूज्यश्री एक दिवस के लिए आमेट आश्रम में रुके। कस्तूरी की सुवास घने जंगल में भी भला कैसे छिपी रह सकती है ? यहाँ भी पता चलते ही लोग दूर-दूर से उमड़ पड़े एवं दिनांक : ३१ अगस्त '९८ को पूज्यश्री का दर्शन-सत्संग पाकर कृतार्थता का अनुभव करने लगे। दिनांक : ३१ की शाम को मंच से ही पूज्यश्री पुष्कर शिविर के लिए रवाना हुए।

पुष्कर : अपनी आध्यात्मिकता के लिए सनातन काल से प्रसिद्ध तीर्थ पुष्कर में स्थित मेला ग्राउण्ड में दिनांक : ३ से ६ सितम्बर तक आयोजित चार दिवसीय वेदांत शक्तिपात साधना शिविर व जाहिर सत्संग समारोह के दौरान देश-विदेश से पधारे हुए लाखों साधकों-भक्तों ने पूज्यश्री के मुखारविन्द से प्रस्फुटित अमृतवाणी का रसपान किया।

दिनांक : ४ सितम्बर को प्रातः आयोजित विद्यार्थी व्यक्तित्व विकास लघु शिविर में हजारों स्कूली बच्चों को सम्बोधित करते हुए पूज्य बापू ने कहा कि उन्हें आलस्य, क्रोध और दुर्बलता को त्यागकर साहसी और पराक्रमी बनना चाहिए। पूज्यश्री ने साहसी, उद्यमी, धैर्यवान और पराक्रमी होने तथा स्मरणशक्ति बढ़ाने के अनेक उपाय बताकर उनके प्रयोग भी कराये।

पूज्यश्री ने बच्चों को नियमित दिनचर्या में प्रातः उठने के बाद व रात्रि को सोने के समय भगवद्स्मरण करने का उपदेश दिया। साथ में, नित्यप्रति प्रातःकाल माता-पिता को प्रणाम करना तथा ध्यान-योग व आसन का अभ्यास करना भी आवश्यक बताया।

श्राद्धपक्ष प्रारंभ होने पर पूज्यश्री ने कहा :

''श्रीमद्‌भगवद्‌गीता व उपनिषदों में श्राद्ध पर विशेष जोर दिया गया है। पितृऋण से मुक्त होने व पितरों की शान्ति के लिए श्राद्ध अवश्य करना चाहिए। यदि श्राद्धकर्म विधिवत् किया जाए तो उससे पितरों को लाभ अवश्य होता है।''

दिनांक : ६ सितम्बर को भारत के कोने-कोने से आये हुए हजारों पूनम व्रतधारियों ने पूज्यश्री का बहुत ही नजदीक से दर्शन व आशीर्वाद प्राप्त किया । तत्पश्चात् ही उन्होंने अन्न-जल ग्रहण किया। उसी दिन एक विशाल भण्डारे का भी आयोजन किया गया, जिसमें हजारों साधु-संतों व श्रद्धालुओं ने प्रेम से प्रसाद पाया। साथ में, साधु-संतों को दक्षिणा भी प्रदान की गई।

शिविर समापन करके पूज्य बापू ६ सितम्बर की शाम को गंगानगर की ओर रवाना हुए।

श्रीगंगानगर : हिन्द-पाक सरहद पर बसे हुए राजस्थान राज्य के जनपद श्रीगंगानगर में दिनांक : ९ से १३ सितम्बर तक आयोजित पाँच दिवसीय सत्संग कार्यक्रम को देखकर लोगों के मुख से सहसा निकल पड़ा : **न भूतो न भविष्यति...** अर्थात् 'ऐसा कार्यक्रम न तो आज तक यहाँ कभी हुआ है और न कभी होगा...।'

यहाँ तो लोगों की भीड़ अंदाज के बाहर थी। सत्संग पाण्डाल विशाल रहने के बावजूद भी छोटा पड़ रहा था। दिनांक : ११ सितम्बर को विद्यार्थियों के लिए आयोजित विशेष सत्संग में हजारों छात्र-छात्राओं को संबोधित करते हुए पूज्य बापू ने कहा :

''जिन विद्यार्थियों का मनोबल ऊँचा होता है, बाधाएँ-विपदायें उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं।''

सत्संग समारोह के अंतिम दिवस ब्रह्मविद्या के ज्योतिर्धर पूज्य बापू ने लाखों श्रद्धालुओं को शराब, पान, तम्बाकू, सिगरेट आदि दुर्व्यसनों से होनेवाली हानियों से अवगत कराते हुए व्यसन छोड़ने के लिए उद्‌बोधन किया। इस पर हजारों लोगों ने अपना हाथ उठाकर इन दुर्व्यसनों को छोड़ने का संकल्प किया।

शाम के सत्संग की पूर्णाहुति के बाद पूज्य बापू ने हिसार के लिए प्रस्थान किया।

आदमपुर (मंडी) : केवल सप्ताहभर की पूर्व सूचना में ही यहाँ की समिति ने पूरी तैयारी कर डाली। यहाँ दिनांक : १५ सितम्बर '९८ को लाखों लोग दिव्य सत्संग में झूम उठे। इस दिन वहाँ के पूरे व्यापारी मंडल ने स्वेच्छा से अपनी दुकानें बंद रखीं एवं पूज्य बापू के स्वागत में मंडी को खूब सजाया।

हिसार : दिनांक : १६ से २० सितम्बर तक हिसार के पुलिस लाइन मैदान में आयोजित दिव्य गीता भागवत सत्संग समारोह में हजारों श्रद्धालु भक्तजनों ने पूज्यश्री के मुखारविन्द से प्रस्फुटित दिव्य वचनामृतों का लाभ लिया। सत्संग का शुभारंभ पूज्य बापू के स्वागत-गान से हुआ। तत्पश्चात् स्थानीय गणमान्य नागरिकों ने पूज्यश्री को माल्यार्पण कर बड़े उत्साह से आपका स्वागत किया।

केन्द्रीय कारागार में आयोजित पूज्यश्री के सत्संग का सीधा प्रसारण केबल टी. वी. के माध्यम से पूरे हिसार शहर में हो रहा था। इसमें हजारों कैदियों को संबोधित करते हुए पूज्यश्री ने कहा :

''तीन प्रकार की जेलें होती हैं : एक तो माँ की गर्भरूपी जेल होती है जिसे आप-हम सभी भोगकर आए हैं। दूसरी यह सामाजिक जेल व तीसरी नरकरूपी जेल।''

पूज्यश्री ने उनको आगे समझाते हुए कहा :

''आप धनभागी हैं क्योंकि आपको जिन कर्मों का फल बाद में नरकरूपी जेल में भुगतना पड़ता उसे आप इसी जेल में भोगकर काट ले रहे हैं।''

दिनांक : १८ सितम्बर को विद्यार्थियों के लिए आयोजित एक विशेष सत्संग में एक महान शिक्षक की भाँति हिसार के विभिन्न स्कूलों के हजारों छात्र-छात्राओं को जीवन में उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति एवं पराक्रम को अपनाने पर बल देते हुए पूज्य बापू ने कहा :

''ये छः सद्‌गुण जिनके जीवन में आ जाते हैं, वे सफलता की ऊँचाइयों को छू लेते हैं। ऐसे गुणसंपन्न लोगों की सहायता करने के लिए देवता भी तत्पर रहते हैं।''

इस दिन पाण्डाल का पूरा वातावरण हूबहू एक स्कूली कक्षा की तरह था। किन्तु फर्क इतना ही था कि किसी भी एक स्कूल की कक्षा के मुकाबले यहाँ अनेक स्कूलों के छात्र-छात्राओं को पूज्य बापू एक अकेले अध्यापक के रूप में शिक्षा का दान कर रहे थे।

देश के इन भावी कर्णधारों को आध्यात्मिक शिक्षा देते समय उनसे बीच-बीच में प्रश्न करना, उनकी जिज्ञासाएँ शान्त करना, यह सब वहाँ उपस्थित सभी श्रद्धालुओं के

लिए अद्‌भुत और अविस्मरणीय बन गया। यह दृश्य भी देखते हुए बनता था कि हरियाणा के भूतपूर्व मुख्यमंत्री भजनलाल चौधरी भी श्रोताओं के ही बीच बैठकर पूज्यश्री के दिव्य वचनामृतों का रसपान कर रहे थे।

इसके बाद पूज्यश्री २० सितम्बर की शाम को लुधियाना के लिए रवाना हो गए।

समाज में फैल रहे कुविचारों के प्रदूषण को दूर करने हेतु संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा 'ऋषि प्रसाद' मासिक पत्रिका, आयुर्वैदिक औषधियाँ, पूज्य बापू की अमृतवाणी की कैसेटें एवं सत्साहित्य का स्टॉल दादर (सेन्ट्रल रेलवे), मुं‌ई में लगाया गया है।

मरुभूमि में प्यासे यात्रि को जैसे पानी मिल जाये उसी प्रकार मायानगरी मुंबई के अति व्यस्त जीवन में आत्मशांति देनेवाले पूज्य बापू के सत्साहित्य की प्राप्ति हेतु जनता उमड़ पडी।

लोगों की मांग को देखते हुए दिनांक १४ सितम्बर '९८ से चल रहे इस स्टॉल की मुदत बढ़ाकर १० अक्तूबर '९८ तक कर दी गई है।

इस आध्यात्मिक निष्काम सेवा के महायज्ञ में भाग लेकर दादर (मुंबई) रेलवे प्रशासन के स्टेशन अधिक्षक श्री पाठकजी एवं उनके अन्य सहकारियों ने गौरवमयी भारतीय संस्कृति के प्रति अपना आदरभाव व्यक्त कर एक नयी मिसाल पेश की है।

दादर रेलवे स्टेशन के १५० वर्ष के इतिहास में 'संत श्री आसारामजी आश्रम' पहली संस्था है, जिसको रेलवे प्रशासन ने सत्साहित्य के स्टॉल के लिए १०० फूट लंबी जगह देकर लोकसेवा में सहयोग दिया है।

*

पूज्य बापू के अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
१ से ४ अक्तूबर '९८	लुधियाना	शिविर आम सत्संग	रोज शाम ३-३० से ५-३०	संत श्री आसारामजी आश्रम, डेहलों रोड, साहनेवाल नहर के किनारे।	(०१६१) ८४४८७५, ८४१४७३, ५३६०१३, ५३३३९२, ४९५९९८.
५ से ७ अक्तूबर '९८	दिल्ली	विद्यार्थी शिविर आम सत्संग	शाम ३-३० से ५-३०	शांति ज्ञान निकेतन डे बोर्डिंग स्कूल, गोयला, नजफगढ़, दिल्ली।	५०१६९७१, ५०१६५५१, ५७२९३३८, ५७६४१६१.
८ से ११ अक्तूबर '९८	मेरठ	सत्संग समारोह	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३-३० से ५-३०	भैंसाली ग्राउण्ड, मेरठ (उ. प्र.).	(०२१) ५१०४८१, ५४४५१८, ६४७०४४, ५४६२२४.
१४ से १६ अक्तूबर '९८	फलासिया	सत्संग समारोह	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३-३० से ५-३०	बस स्टेन्ड के पास, जाडोल रोड, फलासिया (उदयपुर-राज.).	९१७-८५-३२८, ९१७-८५-३४२
२५ से २८ अक्तूबर '९८	गाँधीनगर	विश्वशांति सत्संग समारोह (लाभ पंचमी से प्रारंभ)	सुबह ९ से ११ शाम ३-३० से ५-३०	'शक्तिधाम', सेक्टर ६ ए/घ-२ सर्कल, एस. टी. डेपो के पास, गाँधीनगर।	(०२७१२) २७११८, ३५४६०
३० अक्तूबर से १ नवम्बर '९८	बिलिया	सत्संग समारोह	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३ से ५	'भक्तिधाम', प्रकाश विद्यालय मैदान, सिद्धपुर खेरालु रोड (गुज.).	(०२७६७) २२०२८, २३१०७, २३७११, २०३९३.
४ से ८ नवम्बर '९८	पश्चिम दिल्ली	सत्संग समारोह	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ४-३० से ६-३०	राजा गार्डन चौक, नई दिल्ली-२७	५५८१३०४, ५६८३८२५, ५४६८५३३, ५७२९३३८, ५७६४१६१.
११ से १५ नवम्बर '९८ १३ नवम्बर	वाराणसी	सत्संग समारोह विद्यार्थियों के लिए	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ४-३० से ६-३० सुबह ९-३० से ११-३०	महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ मैदान, वाराणसी (उ. प्र.).	२२३६०१, ३५५७०३.
१८ से २२ नवम्बर '९८ २० नवम्बर	पटना	सत्संग समारोह विद्यार्थियों के लिए	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३ से ५ सुबह ९-३० से ११-३०	गाँधी मैदान, पटना, बिहार।	२२५५९६, २२१७९३, ६७२५९४.

शब्दब्रह्म का खेल : १

बायें से दायें

१. आज्ञाचक्र (४)
३. ज्ञानेश्वर महाराज के गुरु (५)
६. मम हृदय..... प्रभु तोरा। (३)
८. प. पू. संत श्री आसारामजी बापू को.... में आत्म-साक्षात्कार हुआ था। (५)
१०. मनुष्य..... दुर्लभ है। (३)
१२. जप का एक प्रकार (४)
१४. ध्यान में दृष्टि..... होनी चाहिए। (३)
१६. वाणी की विश्रांति (२)
१७. जा के प्रभु..... दुःख देई ता की मती पहले हर लेई। (३)
१८. पंचमहाभूतों में से एक (२)
२०. 'शिवतांडव स्तोत्र' के रचयिता। (३)
२२. ..... किसीका इन्तजार नहीं करता। (३)
२३. गंगा एक पवित्र..... है। (२)
२४. सत्संग-श्रवण के बाद सदैव ..... करना चाहिए। (३)
२६. प. पू. संत श्री आसारामजी बापू ने..... में साधना की थी। (४)
२८. अभिमान (२)
२९. एक मुसलमान फकीर (४)
३०. गुरु..... ही केवलं शिष्यस्य परं मंगलम्। (२)
३२. प्रेरणादायक, प्रेरणास्पद। (३)
३४. निर्मल, शुद्ध। (३)
३५. एक पौधा जिसकी पत्तियाँ चबाने से स्मरणशक्ति विकसित होती है। (३)
३६. तुलसी मीठे..... ते सुख उपजे चहुँ ओर। (३)

ऊपर से नीचे

१. कल्याणस्वरूप (२)
२. रामजी को चौदह वर्ष के लिए..... करना पड़ा। (५)
४. चित्त..... का निरोध ही योग है। (२)
५. 'भक्तमाल' के रचयिता (३)
६. पंचम..... यह वेद प्रकासा। (२)
७. रात्रि, निशा, रजनी। (२)
९. फूल, कुसुम। (२)
११. पर्वत जिस पर देवताओं का निवास माना जाता है। (३)
१२. आदर, प्रतिष्ठा। (२)
१३. एक महान दानवीर (२)
१५. स्वीकार, अपनाने का भाव। (३)
१६. तमाम मनुष्य देहों का आखिरी अंजाम..... है। (२)
१७. कबीरजी के शिष्य, जिनसे हमारे सद्गुरुदेव प. पू. संत श्री आसारामजी बापू की गुरुपरंपरा चली। (७)
१८. प्रणाम, नमस्कार। (३)
१९. ..... नाशन दुर्मतिहरण कलि में हरि को नाम। (२)
२१. एक देवता का शस्त्र। (२)
२२. प्रमाणपत्र, भरोसा करने की वस्तु। (३)
२४. ममत्व, वात्सल्य। (३)
२५. कुकर्मों का फल भोगने का स्थान (३)
२७. ब्रह्मविद्या..... विद्या है। (२)
२९. साधक की तत्परता हो तो आत्म-साक्षात्कार कठिन नहीं वरन्..... है। (३)
३१. पवित्र, शुद्ध। (३)
३२. निश्छल..... से जो भजे, साँई करें निहाल। (२)
३३. गुरु के प्रति श्रद्धा..... ही साधना का उत्तम मार्ग है। (२)

(उत्तर अगले अंक में)

हमारी सिम्त तेरी चश्मे इल्तिफात रहे, हमें गरज़ नहीं दुनियाँ किसीके साथ रहे । हमारे दस्ते तलब में तुम्हारा हाथ रहे, खुदा के घर भी हमारा

पुष्कर तीर्थमें मेला मैदान पर संत श्री आसारामजी के सत्संग-प्रवचन सुनने आए श्रोता कौमी एकता के उस अदभुत दृश्य को देखकर हतप्र

ख्वाजा मोईनुदीन चिश्ती की दरगाह की पगडी संत महाराज श्री ने अपने सिर पर बंधवाई ।

इन्द्र भी स्वर्ग से जल बरसाकर, गुरुदर्शन को आए हैं ।
गुरुवचनों के अमृतजल से, मिलकर सभी नहाए हैं ॥

हिसार में इन्द्र ने मूसलाधार वर्षा के साथ ब्रह्मज्ञानी संत पूज्य बापू का स्वागत किया । पूरा सत्संग-मंडप जलमय हो गया था, फिर भी गुरु के दीवाने भक्तों ने खड़े-खड़े ही सत्संगामृत का पान किया और कीर्तन करते हुए बार-बार पूज्यश्री के नाम का जयघोष किया ।

समाज में फैल रहे कुविचारों के प्रदूषण को दूर क
संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित
'ऋषि प्रसाद' मासिक पत्रिका, सत्साहित्य
पूज्य बापू की अमृतवाणी की कैसेटों के स्टॉ
मुंबई में दादर रेलवे स्टेशन पर उमड़े हुए लो